जनजातीय क्षेत्र में डायन-प्रथा की समस्या एवं समाधान

डॉ. प्रकाश चन्द्र उराँव
पूर्व निदेशक

प्रकाशक
डॉ. रामदयाल मुण्डा जनजातीय कल्याण शोध संस्थान, राँची
अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति, अल्पसंख्यक एवं पिछड़ा वर्ग कल्याण विभाग
झारखण्ड सरकार

जनजातीय क्षेत्र में डायन की समस्या एवं समाधान

सम्पादक

रणेन्द्र कुमार, भा.प्र.से.

निदेशक, डॉ. रामदयाल मुण्डा जनजातीय कल्याण शोध संस्थान, राँची

प्रकाशक

डॉ. रामदयाल मुण्डा जनजातीय कल्याण शोध संस्थान

राँची – 834008

पुनर्मुद्रण

जून, 2020

© डॉ. रामदयाल मुण्डा जनजातीय कल्याण शोध संस्थान

आवरण पृष्ठ : विकास अग्रवाल, कलाकोष, रातू रोड, राँची

मूल्य : एक सौ रुपये मात्र

मुद्रक : कैलाश पेपर कन्वर्शन (प्रा.) लिमिटेड, राँची।

प्राक्कथन

भारत सरकार एवं बिहार सरकार, कल्याण मंत्रालय द्वारा वित्तीय वर्ष 1996-97 में कई शोध अध्ययनों की जिम्मेवारी हमारे संस्थान को सौंपी गई थी। ''जनजातीय क्षेत्र में डायन प्रथा और समस्या एवं समाधान'' भी उन्हीं शोध अध्ययनों में सम्मिलित एक विषय था। संस्थान के शोध अध्ययन दल ने केवल द्वितीयक स्रोतों (Secondary Source) पर आधारित न रहते हुए प्रथम दृष्टया प्रमाणों के एकत्रीकरण करने के लिए सघन रूप से फील्ड वर्क किया था। इस फील्ड वर्क में सूचना दाताओं, गैर सरकारी संगठनों एवं सरकारी अधिकारियों का अभिनन्दनीय सहयोग प्राप्त हुआ। डायन कुप्रथा के दीर्घजीवी होने के मनोवैज्ञानिक, सामाजिक व आर्थिक पहलूओं के गहन विश्लेषण करने की कोशिश इस अध्ययन में की गई है। पाठकों को यह पुस्तक इस कुप्रथा के बहुआयामी कारणों को समझने में मददगार साबित होगी, ऐसा मुझे विश्वास है।

संस्थान के तत्कालीन निदेशक, डॉ. प्रकाश चन्द्र उराँव, उनके सहयोगी डॉ. विजय पाणि पाण्डेय तथा तथ्यों के संकलन में लगे सभी अन्वेषकों के प्रति यह संस्थान हार्दिक आभार प्रकट करता है।

चिंटू दोराईबुरू (झा.प्र.से.)
उप-निदेशक

रणेन्द्र कुमार (भा.प्र.से.)
निदेशक

विषय-सूची

		पृष्ठ संख्या
1	परिचय - अध्ययन-क्षेत्र, उद्देश्य	1-6
2	डायन की परिभाषा - डायन हत्या का प्रारम्भ एवं पृष्ठभूमि	7-18
3	अंधविश्वास क्यों?	19-21
4	डायन-दीक्षा एवं कुप्रभाव	22-30
5	ओझा द्वारा डायन की पहचान	31-34
6	डायन-प्रथा के मुख्य कारक	35-50
	I. डायन हत्या का प्रारम्भ एवं पृष्ठभूमि	
	II. झाड़ फूंक पर विश्वास	
	III. आधुनिक चिकित्सा-सुविधा का अभाव	
	IV. वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अभाव	
	V. विकास योजनाओं की कमी	
	VI. सही नेतृत्व एवं जागरूकता का अभाव	
	VII. आर्थिक कारण, आर्थिक निर्बलता	
	VIII. सम्पत्ति का अधिकार	
7	निष्कर्ष एवं सुझाव	51-62
	I. शिक्षा को बढ़ावा	
	II. जागृति	
	III. विज्ञान का प्रचार-प्रसार	
	IV. समुचित चिकित्सा व्यवस्था	
	V. आर्थिक स्थिति में सुधार	
	VI. पारंपरिक व्यवस्था की जिम्मेवारी	
	VII. महिलाओं को संपत्ति में हिस्सा	
	VIII. मीडिया द्वारा प्रचार-प्रसार	
	IX. ओझा मति-भगत पर रोक	
	X. आवागमन के साधनों का विकास	
8	परिशिष्ट (1 - 6)	63-97
9	ग्रंथ-सूची	98

प्रथम अध्याय

परिचय

अपने उद्‌भव से विकास की विभिन्न अवस्थाओं से होते हुए, सभ्यता के इस सोपान तक आने में अनेकानेक प्राकृतिक विपदाओं के संघर्ष का इतिहास रहा है- आदिम मानव-जीवन का भयानक जंगलों में, भयावह काली रातों में खूँखार वन्य-प्राणियों से अपनी रक्षा करता रहा होगा मानव। कड़कड़ाती धूप में, गर्म आग की लपट-सी लू में, ठिठुरन सर्दी, मूसलधार बारिश में थर्रा देनेवाले गर्जन आदि घटनाओं और प्रकृति के प्रत्येक स्थान को बहुत ही विस्मय और कौतूहल से देखा होगा। मानव ने इस प्राकृतिक शक्तियों के समक्ष मानो अपने का असहाय पाया। इन सब घटनाओं को मानव के खोजी मस्तिष्क ने समझने का प्रयास किया, लेकिन पूरा समझ नहीं पाया और उसे प्रकृति बलशाली लगी। अज्ञात भय पर काबू पाने के लिए उसने हर शक्तिशाली को देवता का रूप दे दिया। प्राकृतिक दुर्घटनाओं से मुक्ति पाने के लिए प्राकृतिक शक्ति के आगे मानव झुक गया। इसी क्रम में वायु, जल और अग्नि आदि को अपना आराध्य देवता बनाया होगा, क्योंकि उसे लगा होगा कि इनके बिना मानव का अस्तित्व ही नहीं होगा। मानव ने अपने अधूरेपन को पूरा करने के लिए काल्पनिक देवी-देवताओं को आलौकिक शक्तियों का स्वामी मान लिया।

कालक्रम में मानव-मस्तिष्क का विकास होता गया। पूजा आदि कृत्यों से प्रकृति की अनियमितता के कारण उन्हें कभी राहत मिली होगी, कभी नहीं। उन्हें लगा होगा कि हमारी पूजा से ही वह शक्ति प्रसन्न हुई। यहीं से प्रारम्भ हुआ होगा अपनी भौतिक सुख-सुविधा एवं समृद्धि के लिए इन प्राकृतिक शक्तियों की उपासना का सिलसिला। ये शक्तियाँ चंचल होती हैं। सदैव एक-सी स्थिति नहीं रहती इनकी। इन्हें प्रसन्न करने के लिए पूजा-स्तुति के उपरान्त बलि का चढ़ावा भी इन्हें भेंट किया जाने लगा। यह सब अपनी मनोकामना की पूर्ति के लिए या इच्छित फल की प्राप्ति के लिए होने लगा और पूजा के विविध रूप विकसित होने लगे। आगे चलकर प्राकृतिक शक्तियों को दो रूपों में देखा जाने लगा। एक ईश्वर, भगवान या देव और दूसरा शैतान, भूत, डायन, चुड़ैल, बिसाहा आदि। पहले को मानव के कल्याणकर्ता के रूप में और दूसरे को मानव को कष्ट देने वाली या अनिष्टकारी शक्ति के रूप में जाना जाने लगा।

मानवविज्ञानियों, मनोवैज्ञानिकों और जागरूक लोगों में चमत्कारी तथा अलौकिक शक्ति में विश्वास के कारणों को खोजने की ललक सदैव रही है। प्रसिद्ध मानवविज्ञानी रॉबर्ट आडर की पुस्तक 'हंटिंग हाइपोथीसिस' में मानव की मूल चारित्रिक विशेषताओं का अच्छा वर्णन है। वे लिखते हैं कि -चाहे हम पढ़े-लिखे हों या निरक्षर, सभ्य हों या असभ्य दो मानसिक गुण सदैव हममें रहते हैं। पहला, ऐसी शक्तियों में विश्वास जो हम से ज्यादा शक्तिशाली और काफी पुरानी है। दूसरा, खुद को दुनिया के केन्द्र में होने का भ्रम। रॉबर्ट का मानना है कि ये दोनों ही मानसिक गुण हमारे आदिम युगीन शिकारी जीवन के अवशेष हैं। इन गुणों को हमारे जीवन से निकाला नहीं जा सकता।

मनोवैज्ञानिक बेरीसिंगर और बेनासी का कहना है कि प्रयोगशाला में और मैदानी परीक्षणों से यह सिद्ध हो गया है कि अंधविश्वास या अलौकिक शक्तियों में विश्वास के फलने-फूलने की दो सामान्य परिस्थितियाँ हैं - पहली है - अनिश्चितता का वातावरण और दूसरी है कम कीमत।

मानव-जीवन को नियंत्रित करने एवं गति देने में विभिन्न सामाजिक प्रक्रियाओं की अहम् भूमिका रही है। इन्हीं प्रक्रियाओं में आस्था एवं विश्वास का भी योगदान है जो मानव-समुदाय के विभिन्न क्रिया कलापों का नियमन एवं नियंत्रण करती है। कोई भी ऐसा समुदाय नहीं है जो इन विभिन्न प्रक्रियाओं से प्रभावित नहीं है।

मानवविज्ञानी मैलिनोवस्की ने ट्रोबिएण्ड द्वीप समूह के मछुआरों का अध्ययन कर बताया कि जब वे परिचित खाड़ी में मछली मारने जाते हैं तो वे अधिक आत्मविश्वासी होते हैं और अंधविश्वासों पर कम भरोसा करते हैं, लेकिन गहरे समुद्र में जाते ही इनका विश्वास अनिश्चित वातावरण के कारण डोलने लगता है। वे अलौकिक शक्तियों का स्मरण करने लगते हैं। इन शक्तियों को प्रसन्न करने के लिए कर्मकाण्डों जैसे- पैसे चढ़ाने, क्रॉस को छूने, ईष्ट को याद करने या ताबीजों को पहनने आदि की प्रक्रिया अपनायी जाती है।

जनजातीय धर्म को बहुदेववादी, जीववादी या सर्वजीववादी कहा गया है। इसका आशय उस विश्वास पर आधारित है कि मानव सहित समस्त चराचर किसी अपार्थिव शक्ति से संचालित होते हैं अर्थात् प्रकृति के समस्त जड़-चेतन में किसी न किसी पारलौकिक शक्ति का निवास होता है। ये शक्तियाँ प्रकृति के समस्त घटकों, जैसे- पर्वत, पहाड, टीला, नदी, प्रपात, पेड़, झाड़ी आदि में

वास करती मानी जाती हैं। ये सामान्य दशाओं में प्रसुप्त अवस्था में लीन रहती हैं, जब तक कि इन्हें छेड़ा न जाये तब तक ये क्षति नहीं पहुँचाती हैं। मानव को ईश्वर या देवता से भय नहीं था, लेकिन भय शैतानी, बुरी शक्तियों से बना रहा। इसे खुश करने के लिए विभिन्न प्रकार की बलि, चढ़ावा आदि देने की प्रथा चल पड़ी। इन दुष्ट, अनिष्टकारी शक्तियों को अपने वश में करने और मनचाहा फल प्राप्त करने के लिए कुछ लोगों ने असामाजिक तरीके अपनाये। ऐसे व्यक्ति निश्चित रूप से धूर्त, स्वार्थी, पाखंडी, असामाजिक विचारों वाले रहे होंगे जो अनिष्टकारी शक्ति को अपनी मुट्ठी में कर उन्हें सिद्ध करने का दिखावा करते आ रहे हैं। यह तो निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि इन अदैवीय शक्तियों के उपासकों से समाज का कोई भला, कल्याण नहीं हुआ है। इन्हीं विकृत शक्तियों को वश में करने के पाखंड के परिणाम के रूप में आटेंगा, नरबलि, बिसाहा, डायन आदि बनाने के लिए शैतानी विद्या का प्रारम्भ हुआ। इसके लिए विशेष नर-नारी को चुनकर जटिल कर्मकाण्डों से गुजारा जाता है। बस, अभी से डायन, बिसाहा आदि की प्रथा की परम्परा जोरदार रूप से चल पड़ी। ऐसा नहीं है कि जनजातीय समाज केवल अनिष्टकारी भूत-प्रेतों पर ही विश्वास करता है बल्कि वे कई कल्याणकारी देवताओं में भी आस्था रखते हैं। छोटानागपुर के जनजातीय समाज के प्रमुख समुदायों में निराकार सर्वोच्च सत्ता पर विश्वास करने के लक्षण भी दृष्टिगोचर होते हैं। मुण्डा के कुलदेवता ओड़ा-बोंगा, उराँव के पुरखा 'पचवलार' तथा 'खड़िया' के बड़ा-बूड़ी कल्याणकारी देवगण हैं, इसी प्रकार देशउली बोंगा, चंड़ीबोंगा आखेट हैं।

जिस प्रकार मानव-सृष्टि-प्रजनन के लिए नर एवं नारी शक्ति का होना अनिवार्य है, उसी प्रकार जनजातीय समाज के संचालन का सामंजस्य भी देवों और डायन शक्ति पर आधारित है। आदि धर्मशास्त्र मतानुसार सिंगबोंगा सूर्यस्वरूप हैं। सूर्य के बिना समस्त संसार एवं प्रकृति का अस्तित्व नहीं है। उसी सिंगबोंगा द्वारा यंत्र, मंत्र, टोटका एक अद्‌भुत विद्या, अविद्या है। यह विद्या बहुत ही गहन एवं पेचीदा है। टोटका मंत्र, शक्ति जानकार नारी या पुरुष डायन या बिसाहा कहलाते हैं। जनजातियों में धारणा है कि देशउली ने जिस स्थान पर आने को कहा, वह बात उसकी पत्नी ने सुन ली और पति को सोमरस पिला कर बेहोश कर दिया तथा निश्चित समय एवं स्थान पर गयी। देशउली देवता जब प्रकट हुए तब पत्नी ने उनसे प्रार्थना की कि आप मेरे पति के स्थान पर मुझे ही 'टोटका मंत्र' बता दें। औरत ने पूर्ण यंत्र-मंत्र, विद्या, ज्ञान हासिल तो किया,

पर यह ज्ञान अपूर्ण रहा। इसलिए लोगों का मानना है कि डायन-विद्या सिर्फ जीव का अनिष्ट कर सकती है। डायनें इस विद्या का उपयोग दूसरों का अनिष्ट करने, दुश्मनों को आर्थिक नुकसान पहुँचाने, शारीरिक कष्ट देने एवं पराजित करने के उद्देश्य से करती हैं।

जनजातीय समुदाय में प्रेत को 'रीवा' या 'मुआ' संबोधन से जाना जाता है। उनमें प्रेतों की कई श्रेणियाँ हैं, यथा- पितृ प्रेत, हातु प्रेत, बुरू प्रेत, वीर प्रेत आदि। जनजातीय क्षेत्र में प्रेतों के प्रचलित नाम हैं - मनिता भूत, लरंकिया भूत, संगी भूत, खड़ी होड़ा, डुब होरा, शक्ति भूत, निगछा भूत, देव भूत, बाड़दा भूत, दरहा भूत, पूयरी भूत, पोसल मुआ आदि। अधिकांशतः जनजाति परिवार - मुण्डा, हो, आदि के घर में एक प्रेत-पूजा स्थल होता है, जिसे 'आडिंग' कहा जाता है। यहा पितृ-प्रेतों को प्रत्येक दिन 'पिण्डदान' के रूप में पका हुआ पवित्र भोजन समर्पित किया जाता है। अदृश्यमान जगत में बसने वाले 'ओझा', गुणी, सोखा, मति, डायन आदि कई जाते/जाती हैं। वे अपने तंत्र-मंत्र और साधना से प्रेत-लोक तक की पहुँच रखते/रखती हैं। इसके अलावे वे प्रेतों को नियंत्रित एवं दंडित करते हैं- कहा जाता है कि असुर राजा गयासुर बहुत बड़ा तांत्रिक और ओझा था जो हजारों प्रेतों को नियंत्रित करता था। जनजातीय क्षेत्र में जो ओझा, मति या डायन होते हैं वे अधिकांशतः विनाशकारी कार्य ही करते हैं। इसलिए उन्हें लोग हेय और भय की दृष्टि से देखते हैं। ओझा, मति और डायन के मंत्रों में मारण, मोहन, उच्चाटन, आधिकरण आदि प्रमुख होते हैं जिसका प्रयोग या दुष्प्रयोग में वे करते हैं। तंत्र-मंत्र, साधना के साथ-साथ उन्हें स्थानीय रूप में उपलब्ध और औषधीय गुणों से युक्त जड़ी-बूटी का भी ज्ञान होता है। जिनका प्रयोग वे विभिन्न रोगों के निदान के लिए करते हैं। जनजातीय क्षेत्र में डायन पूर्व काल से ही भय और आतंक का पर्याय मानी जाती है, क्योंकि क्षति या नुकसान पहुँचाने में ही उन्हें दक्ष माना जाता है।

प्रकृति के वे घटक, जो दृश्यमान हैं, सभी दृश्यमान जगत की चीजे व संपदाएँ हैं जिन्हें हम अपनी आँखों से देखते हैं। परन्तु ऐसा विश्वास किया जाता है कि इसके परे एक अदृश्य जगत भी है जिसमें परा शक्तियाँ निवास करती हैं।

इन अदृश्य शक्तियों के प्रति जनजातीय समुदाय अत्यंत उत्सुक और संवेदनशील रहा है। इसी जगत में उसके देवता, बोंगा देवता, देवी और भूत, प्रेत या मुआ निवास करते हैं। जनजातीय क्षेत्र में उनके रूपनाम कार्य आदि की परिकल्पना धार्मिक लोक में है। डायन या बिसाइन का सीधा संबंध अदृश्य प्रेतलोक से जुड़ा

होता है। अदृश्य जगत में भटकने वाली मृतात्माएँ ही प्रेत, भूत, चुड़ैल आदि के रूप में जानी जाती हैं।

मानव के लिए उसकी सृजनात्मक प्रवृत्ति ही संभवतः सर्वोत्तम देन है। उस सृजनात्मक या साधानात्मक क्षमता की सबसे उत्कृष्ट अभिव्यक्ति समाज है, परन्तु यह समाजिक जीवन केवल सुख, शांति और संगठन का ही घेरा नहीं है, अपितु अनेक प्रकार की समस्याओं का हल ढूंढने के लिए सोच-विचार कर समाधान भी निकालना पड़ता है। सदियों से चली आ रही रूढ़ियाँ मानव-जीवन के मानस-पटल के अवचेतन मन में गहराई से जड़ जमा चुकी हैं झाड़-फूँक करने वाले ओझा गुणी आम लोगों के इस अंधविश्वास का मनोवैज्ञानिक भयादोहन कर उनका भावनात्मक शोषण करके अपनी आजीविका चलाते हैं और डायन-प्रथा का विश्वास उतना ही पुराना है जितना मानव समाज। यह प्राचीन, विश्वव्यापी और दृढ़ विलक्षणता के बावजूद उपयोगी है। कुछ मुख्य भाग जो इसके घेरे में हैं वे लगभग सर्वव्यापी हैं। डायनों को शैतान के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। मानव का अंधविश्वासी होना मात्र अशिक्षा से जुड़ा है, ऐसा समझना भ्रम है, क्योंकि पढ़े-लिखे तथाकथित उच्च शिक्षित समाज के जिम्मेवार लोग भी ऐसी घटनाओं कर्मकाण्डों में भाग लेते पाये गये हैं जिसको अंधविश्वास की श्रेणी में रखा जाता है। ये उच्च शिक्षित समाज के जिम्मेवार लोग किसी चमत्कार के चक्कर में कोई न कोई अंधविश्वासी, अवैज्ञानिक तरीका अपनाते हैं - तो अशिक्षित ग्रामीणों, जनजातियों की स्थिति क्या होगी, कल्पना की जा सकती है।

बिहार के जनजातीय क्षेत्र में जनजातीय या गैर-जनजातीय समाज - सभी में यह प्रथा पायी जाती है। जनजातीय समुदाय सामाजिक परिवर्तन से प्रायः दूर है। बाहरी जीवन का प्रभाव वर्तमान में परिलक्षित हो तो रहा, परन्तु इन परिवर्तनों के बावजूद जनजातीय जीवन अपने पुरातन विश्वासों में आस्था रखता है। यह कोई आश्चर्यजनक या अजूबा स्वरूप नहीं है, परन्तु यह वह पुरातन स्वरूप है जिसने मानव-जीवन में घट रही कई घटनाओं को आलौकिक, चमत्कारिक एवं दैवी स्वरूप प्रदान किया है। देवी-देवता, भूत-प्रेत, जादू-टोना, डायन-बिसाहा इन्हीं को स्वरूप देने की प्रक्रियाओं की उपज है जो आज भी जहाँ-जहाँ मानव की अस्तित्व है, वहीं अपना प्रभाव जमाये हैं। यह अलग बात है कि जनजातीय जीवन में यह अपनी महत्वपूर्ण भूमिका बनाए हुए हैं। तथाकथित सभ्य समाज में ऐसा विश्वास नहीं है, ऐसी बात नहीं है। सभी समुदायों में, सभी कालों में, सामाजिक परिवर्तन एवं शिक्षा के प्रसार के पश्चात् भी इन प्रक्रियाओं के अस्तित्व

से इनकार नहीं किया जा सकता। फिर भी जनजातीय जीवन में उनकी भूमिका प्रबल एवं निर्णायक होती है।

अध्ययन क्षेत्र :

दक्षिण बिहार के छोटानागपुर क्षेत्र के गुमला, लोहरदगा, पलामू, प. सिंहभूम राँची, पू. सिंहभूम जिलों के विभिन्न प्रखण्ड एवं गाँव, जहाँ जनजातीय आबादी अधिक है, उस क्षेत्र में यह अध्ययन सन् 1998 के द्वितीयार्द्ध में सम्पन्न किया गया।

उद्देश्य :

1. डायन-प्रथा में विश्वास की वृद्धि कैसे हुई, इसकी जानकारी प्राप्त करना।
2. जनजातीय और गैर-जनजातीय समुदाय में डायनों के प्रति अवधारणा को जानना।
3. डायन-हत्याओं में वृद्धि के कारक-तत्व कौन-से हैं?
4. डायन-समस्या के समाधान के लिए सुझाव देना।

शोध-विधिः

अध्ययन क्षेत्र के निवासियों, सरकारी अधिकारियों, भुक्तभोगी डायन भगतों आदि लोगों से अनुसूची के माध्यम से, प्रत्यक्ष बातचीत कर तथा साक्षात्कार द्वारा आँकड़े एकत्र कर विश्लेषण किया गया।

द्वितीय अध्याय

डायन की परिभाषा

मानव-सभ्यता के विकास में पहले-पहले जादू आया या धर्म, यह एक विवाद का विषय है। फ्रेजर जेम्स जैसे विचारक मानते हैं कि धर्म से पहले जादू ही विकसित हुआ था। आदिम मानव-समाज में जादू-टोना का बोलबाला था, पर इसके असफल होने पर अलौकिक शक्ति की पूजा आराधना शुरू हुई जिसने धर्म की नींव डाली।

मैलिनोवस्की के अनुसार- जादू विशुद्ध व्यावहारिक क्रियाओं का योग है, जिसका उद्देश्य की पूर्ति के साधन के रूप में प्रयोग किया जाता है। मैलिनोवस्की ने जादू के दो भेद किये हैं - काला जादू और सफेद जादू। सफेद जादू को सामाजिक स्वीकृति प्राप्त है, क्योंकि इसका उद्देश्य दूसरों को लाभ पहुँचाना या उपकार करना होता है। इसमें जनकल्याण की भावना रहती है, जबकि काला जादू का उपयोग दूसरों को क्षति पहुँचाने के लिए किया जाता है। इसको असामाजिक कार्य माना जाता है। इससे सामाजिक प्रतिष्ठा गिरती है। टोना प्रायः औरतों का काम माना जाता है। इन कार्यों को करने वाली औरतों को डायन कहा जाता है। ऐसी धारणा है कि डायन किसी प्रेतात्मा को अपने वश में कर लेती है और उसी के माध्यम से लोगों का अनिष्ट करती है।

सर एडवर्ड कोक कहते हैं कि डायन या बिसाहा वह है जो शैतानी शक्तियों के साथ गठबंधन रखता है और अपनी काली करतूतों के लिए मंत्रणा करता है। डायन किसी को रहस्यमय ढंग से बीमार कर देती है या मार देती है। डायन की हानि पहुँचाने की कला और इच्छा के कारण ही लोग उससे डरते हैं।

इवान्स प्रिचार्ड ने मध्य अफ्रीका की जनजाति अजान्डे की चर्चा करते हुए लिखा है कि टोना एक काल्पनिक अपराध है। डायन जो चाहती है, कर नहीं सकती है। इससे केवल एक मनोवैज्ञानिक क्षुधा शांत होती है।

डायन-प्रथा को कुछ इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है - 'वो विश्वास जिसमें अप्राकृतिक शक्ति का उपयोग नुकसानदेह, अनन्त बुरे कार्यों के लिए किया जाय'। यह ऐसी क्रिया है जो अधिकांश काले जादू के प्रयोग से सम्पन्न होती है। यह सामान्यतः विनाशक या विध्वंसक प्रयोजन के कार्य के

उपयोग में लायी जाती है।

इनसाक्लोपीडिया ब्रिटेनिका के अनुसार - 'जादू और डायन-प्रथा दोनों का एक साथ अध्ययन या विचार करने की जरूरत है। जादूगरी और डायन-प्रथा, दोनों में काफी नजदीकी रिश्ता है। जादूगरी के अन्तर्गत गैरकानूनी कार्य विनाशक-कार्य के लिए किया जाता है, इसके पश्चात् इनके कार्य करने का ढंग और नैतिक स्तर एक ही है।

पश्चिमी सभ्यता के अन्तर्गत जादूगरी और डायन का उपयोग अंतः परिवर्तनीय रूप में किया जाता है। लेकिन मानव-विज्ञानी के विचार में इन्हें अलग-अलग रखना चाहिए।

डायन शब्द का शाब्दिक अर्थ 'डाह' होता है। डाह से अभिप्राय है ईर्ष्या, द्वेष। डायनपन एक विचित्र कला है जो जन्मजात है या सीखकर और अभ्यास द्वारा भी अर्जित की जाती है। प्रायः इसका उपयोग डायन अपने दुश्मनों को आर्थिक नुकसान, शारीरिक कष्ट एवं पराजित करने के उद्देश्य से करती है। वह डाह वश किसी को जीवन में खुशीपूर्वक जीते हुए नहीं देख सकती है। डायन अहितकर जादू की साधिका होती है। यह भूत-प्रेत आदि बुरी मृतात्माओं की साधिक होती है। डाह के कारण की गई क्रिया ही डायन कहलाती है। डायन से लोगों के मन में भय का भाव रहता है। डायन हड्डी के टुकड़े, केश, चिथड़ा आदि का प्रयोग माध्यम के रूप में करती है।

वैसे तो डायन को कर्म करते देखा नहीं जा सकता है, किन्तु अकेले में लोग इससे भय का अनुभव करते हैं। डायन की बाहरी पहचान में कह सकते हैं कि प्रायः वह महिला जो थोड़ी असामान्य, चेहरा विकृत, भयानक तथा उग्र-स्वभाव हो। आँखें लाली लिए, जीभ का अगला भाग काला, दाँत तिरछा होता है। प्रायः वैसी ही औरतों का डायन घोषित किया जाता है। डायन कहते ही एक ऐसी महिला का चित्र कल्पना में आता है जो किसी का भी नुकसान कर सकती है तथा जान भी ले सकती है। जनजातीय क्षेत्र में डायन पूर्व काल से ही भय और आतंक का पर्याय मानी जाती है, क्योंकि क्षति पहुँचाने में ही उसे दक्ष माना जाता है।

डायन-हत्या का प्रारंभ :

ग्रामीण-अंचलों एवं जनजातीय क्षेत्रों में कई तरह की कुप्रथाएँ एवं अंधविश्वास का प्रकोप देखा जाता है, जिसमें भूत-प्रेत, जादू-टोना, शकुन-अपशकुन,

पशुबलि आदि तो है ही, किन्तु इस सबसे भयानक कुप्रथा जो है वह है डायन-प्रथा जिसके कारण इस क्षेत्र में कई निर्दोष महिलाएँ अपनी जान गँवा चुकी हैं। जो जिन्दा हैं भी वे गाँव, समाज में घृणित और लांछन भरा अपमानजनक जीवन जीने को बाध्य हैं। डायन-प्रथा झारखण्ड क्षेत्र के जनजातियों के लिए एक बहुत बड़ी समस्या बनकर उभरी है। साधारणतः डायन शब्द एक गाली के रूप में सुनाई पड़ती है। लोगों में प्रबल अंधविश्वास है कि प्रायः डायन नामक यह अदृश्य शक्ति महिलाओं में ही पाई जाती है तथा वह डायन महिला इस शक्ति के माध्यम से रिश्तेदार और गाँव के लोगों का अनिष्ट करती है।

हाल के वर्षों में औरतों को 'डायन' करार देकर उनकी हत्या करने की घटनाओं में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है। विशेषकर दक्षिण बिहार के जनजाति बहुल क्षेत्रों में इस प्रकार की घटनाएँ आम हो गई हैं। आखिर अंधविश्वास की कोख से जन्मे इस अमानवीय कृत्य की शुरुआत कब से हुई? डायन हत्याओं के संबंध में छोटानागपुर के तत्कालीन आयुक्त ई.टी. डाल्टन ने अपनी पुस्तक 'डिस्क्रीप्टीव इथनोलोजी ऑफ बेंगल' में कुछ चर्चा की है जो सन् 1857 के सिपाही विद्रोह के बाद कानून-व्यवस्था ढीली पड़ गई थी जिससे अराजकता उत्पन्न हो गई। अंग्रेजी शासन द्वारा जनजातियों के सांस्कृतिक, राजनीतिक, आर्थिक संगठन पर कुठाराघात किया जिससे गाँव, टोला, मोहल्ला या एक ही परिवार के लोगों के बीच आपसी मतभेद हुआ। इस मतभेद से नैतिक, धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक ढाँचा टूटा। इससे उनकी पारम्परिक व्यवस्था, सामाजिक कसाव में कुछ खामियाँ आयीं जिससे लोगों में आपसी मनमुटाव हुआ। यही आपसी मनमुटाव आगे चलकर रंजिश में बदल गया जिसके परिणामस्वरूप डायन हत्या शुरू हुई।

भारतीय समाज में प्राचीन-काल से ही स्त्रियों को समाज में काफी सम्मानित स्थान दिया गया है। शास्त्रों में तो यहाँ तक लिख दिया गया है कि 'यत्र नार्यस्तु पूज्यते, रमन्ते तत्र देवता'। यानी जहाँ नारी की पूजा होती है वहाँ देवता निवास करते हैं। लेकिन वास्तविकता तो यह है कि आज भी भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति काफी दयनीय है। जहाँ एक तरफ विश्व 21वीं सदी में प्रवेश कर हर तरह के विकास और सभी को समानता का अधिकार देने की बात कर रहा है वहीं दूसरी ओर भारत की अधिकांश महिलाएँ अत्याचार, प्रताड़ना और कुंठा भरी जिन्दगी बसर कर रही है। इतना ही नहीं महिलाओं को पुरुष प्रधान

समाज अपने हर तरह के शोषण का शिकार बना रहा है, डायन करार कर अनेक महिलाओं की हत्या तक कर दी जा रही है। इतना क्रूर और शर्मनाक उदाहरण शायद ही कहीं और देखने को मिलता होगा जैसा कि देश के जनजातीय क्षेत्रों में देखने को मिलता है।

देश में एक तरफ जहाँ महिलाएँ पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चल रही हैं उनके बीच मानसिक, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक हर तरह का विकास हुआ है- देश की राजनीति में भी वे बढ़-चढ़ कर हिस्सा ले रही है, परन्तु दूसरी तरफ ग्रामीण महिलाओं का एक बहुत बड़ा हिस्सा मानसिक, शारीरिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्तर पर प्रत्येक प्रकार के शोषण का शिकार होता आ रहा है। उनके जीवन का अधिकांश भाग घर की चहारदीवारी में ही बीत जाता है। उन्हें अपने परिवार के पुरुष वर्ग के संरक्षण में ही सारी उम्र गुजारनी पड़ती है। बचपन में पिता के संरक्षण, विवाह के पश्चात् पति के संरक्षण में और अपने जीवन के अंतिम चरण में पुत्र के संरक्षण में रहना पड़ता है। अगर वे घर की चहारदीवारी के बाहर कदम रखती हैं तो अनेक प्रकार के उलाहनों का सामना करना पड़ता है। समाज में एक तरफ जहाँ महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार देने की बात हो रही है, वहीं दूसरी तरफ उन्हें हर संभव तरीके से दबाने का प्रयास किया जाता है। अगर उनके अंदर कोई प्रतिभा है तो उसे फलने-फूलने का उचित वातावरण नहीं मिल पाता है। जिस कारण समाज का एक बहुत बड़ा हिस्सा, जो महिलाओं का है, अशिक्षा, अंधविश्वास, आर्थिक तथा मानसिक पिछड़ेपन से जकड़ा हुआ है।

बिहार के जनजातीय क्षेत्र में शिक्षा तथा जागरूकता का घोर अभाव है। शिक्षा के अभाव के कारण उनमें आधुनिक और वैज्ञानिक सोच पनप ही नहीं पाती है। जहाँ अशिक्षा होगी, वहाँ अंधविश्वास को पनपने और फलने-फूलने की अनुकूल परिस्थितियाँ मिलती हैं। अंधविश्वास के कारण समाज में अनेक प्रकार की कुरीतियों का समावेश होना अवश्यंभावी है। महिलाएं साक्षरता तथा शिक्षा की कमी के कारण मानसिक रूप से मजबूत नहीं हो पाती है तथा आत्मबल कमजोर रहता है। इसलिए अपने ऊपर हो रहे अत्याचार का विरोध नहीं कर पाती। महिलाओं के ऊपर हो रहे अत्याचार का सबसे भयानक रूप उसे डायन बताकर मार देना है। ऐसी घटनाओं में लगभग एक प्रतिशत ही पुरुष पर बिसाहा होने का आरोप लगता है, क्योंकि अशिक्षित होने के बावजूद अपने ऊपर लगाए गए आरोप का प्रतिकार करने की उनमें पूरी क्षमता होती है।

आज एक ओर जहाँ वैज्ञानिक अंतरिक्ष के रहस्य का पता लगाने तथा उसको सुलझाने में व्यस्त हैं, 'ई-मेल' और 'इन्टरनेट' का युग आ गया है, वहीं दूसरी और जनजातीय क्षेत्र निवासी अपनी रूढिवादी परम्परागत विचारधारा के मनोवैज्ञानिक परिधि में उलझे हुए हैं। दक्षिण बिहार के गुमला, राँची, दुमका, पू. सिंहभूम, पलामू और लोहरदगा जिलों के अधिकांश गाँव अंधविश्वास की चपेट से ग्रसित हैं। यहाँ डायन-हत्याओं का सिलसिला रुकने का नाम ही नहीं ले रहा है। आए दिन समाचार-पत्रों में पढ़ने को मिलता है कि अमुक जगह पर महिला को डायन करार कर उसके साथ अमानुषिक व्यवहार किया गया तथा उस महिला के साथ ही उसके परिजनों को भी मुर्गा का खून पिलाया गया ताकि उसके अन्दर से डायन का गुण समाप्त हो जाय या डायन करार दी गई महिला की हत्या कर दी गई। डायन करार दी गई महिलाओं के साथ अनेकानेक अमानवीय घटनाएँ प्रतिदिन होती रहती हैं, परन्तु इसका सही आंकड़ा सरकार तक नहीं पहुँच पाता है। एक गैरसरकारी आंकड़े के अनुसार प० सिंहभूम जिले में जनवरी 1986 से दिसम्बर 1995 तक लगभग 200 महिलाओं की हत्या डायन होने के संदेह पर कर दी गई। इसका एक मुख्य कारण यह है कि बिहार के सभी जिलों के मुकाबले प. सिंहभूम जिले में साक्षरता का प्रतिशत काफी कम है। महिलाओं में साक्षरता का स्तर तो और भी नीचे है। शिक्षा की कमी के कारण उनमें अंधविश्वास काफी है। इसी रूढ़िवादी विचारधारा के कारण डायन-प्रथा और हत्या का जोर है। महिलाओं को डायन करार कर मारने की घटना दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। डायन को अंग्रेजी में "Witch" कहते हैं। "Witch" का अर्थ ऐसे लगावें तो डायन के नाम पर महिलाओं पर कितना क्रूर अत्याचार हो रहा है इसका पता चलेगा :

W	-	Women
I	-	Indignity
T	-	Torture
C	-	Calamity
H	-	Handicap

सिंहभूम के अतिरिक्त, राँची, गुंमला, पलामू और लोहरदगा जिलों में डायन से होने वाले अमानवीय व्यवहार और हत्याओं का मामला प्रकाश में आता रहता है। वैसे तो गैर सरकारी आंकड़े डायन हत्याओं की संख्या अधिक ही बताते हैं, लेकिन सरकारी आंकड़े, जो संबंधित थानों में प्रतिवेदित हुए थे। इस तरह हैं:

गुमला

वर्ष	प्रतिवेदित काण्ड	मृतकों की संख्या
1992	15	18
1993	16	17
1994	14	15
1995	10	12
1996	07	07
		69

प० सिंहभूम

वर्ष	प्रतिवेदित काण्ड	मारे गये		कुल मृतकों की संख्या
		पुरुष	महिला	
1993	18	06	19	25
1994	12	02	13	15
1995	09	05	16	21
1996	07	05	04	09
1997	07	-	06	06
1998	05	-	06	06
कुल	58	18	64	82

क्षेत्रीय आरक्षी महानिरीक्षक कार्यालय से प्राप्त आंकड़े :

जिला	वर्ष	प्रतिवेदित काण्ड
राँची	1991-96	89
लोहरदगा	1991-96	98

उपरोक्त आंकडों से स्पष्ट होता है कि महिलाओं को ही अधिक शिकार बनाया गया है। कुल 151 हत्याओं में से 64 महिलाएँ ही हैं।

प. सिंहभूम के ग्रामीण क्षेत्रों, विशेषकर नवामुंडी, जामदा, मंझारी, जगन्नाथपुर क्षेत्र, में डायन-हत्या अधिक ही होती है। आंकड़ों पर नजर डालने से लगता है कि 1995 के बाद डायन हत्याओं में कमी आई है। इसका प्रमुख कारण है - तत्कालीन उपायुक्त अमित खरे द्वारा गाँव-गाँव में जनजागरण अभियान तथा रैलियों का आयोजन, जिसे आरक्षी अधीक्षक आलोक राज ने भी जारी रखा है। इसी का असर है कि डायन हत्याओं की घटनाओं में कमी आयी है। श्री राज इन घटनाओं का मुख्य कारण जमीन और सम्पत्ति हड़पने की प्रवृत्ति बताते हैं। डायन का आरोप लगाकर संपत्ति वाली कमजोर महिला की हत्या कर दी जाती है। दूसरा कारण गाँवों में चिकित्सा-सुविधा का अभाव भी है। जिसके कारण लोग ओझा के चक्कर में फंस जाते हैं। एक बार ओझा के चक्कर में फंस जाने के बाद उससे निकलना भोले-भाले ग्रामीणों के लिए असंभव हो जाता है। जनजातीय क्षेत्र के लगभग सभी प्रखण्ड के विभिन्न गाँव भूत-प्रेत और डायनों के भय से त्रस्त हैं। इससे स्त्रियों की हत्या, बेइज्ज्ती, बर्बादी और पलायन में लगातार बढ़ोत्तरी हो रही है।

क्षेत्रीय अध्ययन के दौरान विभिन्न घटनाओं के सुनने, समाचार-पत्रों में प्रकाशित होने वाली विभिन्न घटनाएँ, जो डायन, ओंझा और डायन-प्रथा से संबंधित हैं, के पढ़ने से मुख्य बात जो प्रकाश में आयी है वह यह है कि दक्षिण बिहार का हिस्सा जो जनजातीय बहुल है उन हिस्सों में इस प्रकार के अंधविश्वासों की संख्या कुछ अधिक ही है।

भारत सरकार के ग्रामीण क्षेत्र तथा नियोजन मंत्रालय ने 1998 में देश के दरिद्रतम जिलों का सर्वेक्षण करवाया। सर्वेक्षण से यह बात सामने आयी है कि पूर देश के सौ दरिद्र जिलों में से लगभग 38 जिले बिहार के ही हैं। इनमें राँची, पलामू, लोहरदगा, हजारीबाग, गुमला, प. सिंहभूम आदि अनेक जिले आते हैं। इन सभी इलाकों में बसने वाली जनसंख्या का अधिकतम भाग जनजातियों का है।

इन जिलों के दरिद्र होने के मुख्य कारणों में से एक है कि इन क्षेत्रों में शिक्षा का प्रचार-प्रसार आजादी के पचास वर्ष बाद जितना होना चाहिए था उतना नहीं हुआ। बहुत से गाँव तो ऐसे हैं जहाँ एक भी व्यक्ति पढ़ा-लिखा नहीं है। उनकी जीविका का मुख्य साधन कृषि है, वहाँ के लोग कुप्रथाओं, अंधविश्वासों आदि से बाहर नहीं निकल पाते हैं। इन क्षेत्रों में ओझा, भगत आदि का प्रभाव काफी अधिक है। डायन तथा डायन भगाना, यहाँ तक कि डायन करार कर किसी महिला को मार डालना तो इस क्षेत्र के लिए एक आम बात है। इन क्षेत्रों में

डायन प्रायः वे महिलाएँ घोषित की जाती हैं जिनकी स्थिति समाज में सुदृढ़ नहीं है, जो विधवा हैं, जिनका कोई सहारा नहीं है। अगर है भी तो उनमें समाज के आरोपों का विरोध करने की क्षमता नहीं है। इस प्रकार की अनेक घटनाओं में एक घटना का वर्णन करना अप्रासंगिक नहीं होगा, जिसमें ओझा का पूरे गाँव पर दबदबा रहा और अंततः एक विधवा स्त्री को डायन घोषित कर मार डाला गया।

यह घटना राँची शहर से लगभग 40 कि.मी. दूर एक गाँव हेसियों की है। एक तरफ राँची शहर जहाँ विकास की गति में तेजी से भाग रहा है वहीं दूसरी तरफ अभी भी गाँव के लोग अंधविश्वास की बेड़ियों में जकड़े हुए हैं। राँची शहर में जहाँ आवागमन के साधनों, हर प्रकार की आधुनिक सुख-सुविधाओं की भरमार है वहीं कुछ गाँवों में यातायात के साधनों तक का अभाव है। बरसात के दिनों में तो स्थिति यह हो जाती है कि अगर कोई ग्रामीण गाँव की नदी के दूसरे पार गया हुआ है और बरसात शुरू हो गयी है तो उसका गाँव लौटना असम्भव है। एक ओर जहाँ शहर के बच्चे विज्ञान और कम्प्यूटर की उलझी गुत्थियों को सुलझाते हैं वहीं दूसरी ओर कुछ गाँव के बच्चों ने आज तक विद्यालय का मुँह तक नहीं देखा है। स्त्रियों में शिक्षा की बात तो सोची भी नहीं जा सकती। ऐसे जहाँ शहरों में स्त्रियाँ-लड़कियाँ पढ़-लिखकर अपने कैरियर और आर्थिक स्वावलंबन की बात सोच रही हैं वहीं गाँव में औरतों की यह स्थिति है कि वे किसी अजनबी को देखकर घरों में दुबक जाती हैं। ऐसी स्थिति होने के कारण वहाँ के लोगों में परम्परागत रीति-रिवाजों के प्रति आस्था काफी गहरी है। यह तो ठीक है, लेकिन इसके साथ ही अंधविश्वास, सामाजिक कुरीतियाँ हावी हो गयी हैं। यह चिन्ताजनक है।

हेसियो ऐसा एक गाँव है जहाँ अप्रैल 1998 में एक दिन एक घटना घटी। इस गाँव के एक युवक सोमा मुण्डा के भाई कुडु मुण्डा को कोई गंभीर बीमारी हो गयी। काफी इलाज हुआ, पर वह ठीक नहीं हुआ, तब उसे मुरगडीह गाँव के एक ओझा को दिखाया गया। ओझा ने बतलाया कि सोमा मुण्डा की पत्नी मायके से थोपा भूत लायी है जिसकी वजह से उसकी बीमारी ठीक नहीं हो रही है। उपाय पूछने पर उस ओझा ने बताया कि पूजा-पाठ कर मुर्गी की बलि देनी होगी। इससे थोपा भूत सोमा मुण्डा के घर भेज दिया जाएगा और भूत वापस हो आएगा। बाद में पूजा-पाठ के बाद ओझा ने भूत को सोमा मुण्डा की पत्नी बंदा सरना के मायके भेज दिया। तत्पश्चात् कुडु की हालत में सुधार होने लगा। इसी बीच करमा मुण्डा नाम के एक अन्य व्यक्ति का लड़का रवीन्द्र और

बेटी गुड्डी, दोनों बीमार पड़ गये। उनके सही इलाज के उद्देश्य से करमा मुण्डा अपने बच्चों को लेकर ससुराल गया। बीमारी का सही इलाज न हो पाने के कारण उसकी लड़की की मृत्यु हो गयी। लड़के की हालत में भी अपेक्षित सुधार नहीं हो पा रहा था। तब गाँव वालों ने उससे कहा कि जरूर किसी डायन या भूत-प्रेत का प्रकोप है। किसी अच्छे ओझा को बुलाकर सारे गाँव का भूत-डायन भगवाया जाय। गाँव वालों की सलाह मानकर करमा मुण्डा ने बंदगाँव के भगत मोहन सिंह मुण्डा को बुलाने का प्रबंध किया। लगभग 1500 रुपये खर्च कर मोहन सिंह मुण्डा को गाँव बुलाया गया। मोहन सिंह मुण्डा ने दावा किया कि गाँव में बहुत से भूत-प्रेत, डायनों को प्रकोप है। इन सभी से उनका अपराध कबूल करवाकर ही मैं दम लूँगा

भूत भगाने की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। इसके लिए भगत ने एक खपड़ा लोहबान, पका हुआ चुक्का, काला-सफेद कपड़ा, मिठाई, कच्चा धागा, मुर्गा, केला, पीपल, सखुआ और बांस की डाल की मांग की। करमा मुण्डा ने कठिनाई से इन सामग्रियों का इंतजाम किया, क्योंकि उसकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। किसी तरह से अपने परिवार का भरण-पोषण वह करता था। मोहन सिंह मुण्डा भगत ने अपने सारे कर्मकाण्ड को खुले मैदान में प्रारम्भ किया। उस मैदान में हवन-स्थल बनाया गया जिसे चारों ओर से घेर दिया गया ताकि अंदर कोई आदमी जाय तो बाहर से दिखाई न पड़े। सिर्फ आदमी के घुसने लायक एक दरवाजा खोला गया। उसके अंदर भगत ने सुखआ, केला, बांस और करमा वृक्ष की डाल से बेदी बनायी। वहाँ कलकत्ता की काली, दिउड़ी माता और नवनी की पुतलियाँ प्रतीक रूप में बनाई। सारी पूजन-सामग्री से उनकी पूजा शुरू की। भगत ने गाँव की सभी औरतों से चावल की एक-एक पोटली कपड़े में बांध कर मंगवाई थी जिस पर उनका नाम लिखा था। इसके अलावा हर घर से थोड़ा-थोड़ा चावल भी मंगवाया था। उसने उसे एक सूप और टोकरी में एकत्रित कर उसी पूजा-स्थल पर रखवाया। अब मंचोच्चारण के बाद वह उस चावल को बार-बार फेंटता और बीच-बीच में सामने रखी आग में लोहबान छिड़कता था। लोहबान डालते ही धुएं का गुबार उठता था। साथ ही पूजा-स्थल पर एक सरसों तेल का दीप भी लगातार जला कर रखा था। उसके पूजन कार्य में किसी प्रकार का विघ्न न पड़े इसके लिए हथियार बंद पहरेदारों की टोली एकत्र की गई थी, जो दिन-रात पूजा स्थल की देख-रेख में लगे थे। साथ ही गाँव में माँस-मछली, मदिरा के सेवन पर पूर्णतः प्रतिबंध भगत ने लगवा दिया था।

हवन-स्थल में झांकने या देखने की पूरी रोक लगी हुई थी। भगत का कहना था कि अगर कोई भी व्यक्ति हवन-स्थल में झांक लेगा तो अनर्थ हो जाएगा। भयवश किसी भी गाँव वाले की हिम्मत नहीं हुई कि वह अंदर देख सके। प्रतिदिन भगत यज्ञ-स्थल में प्रवेश करता, मंत्रोच्चारण के रूप में बड़बड़ता हुआ आहुति देता और लगभग आठ-दस मिनट ठहरने के बाद बाहर निकल आता। बाहर आकर भगत अपने पहरेदार के साथ गाँव में स्वेच्छा से घूमता जिस चीज की फरमाइश करता उसे तत्काल पूरा किया जाता था। उसपर किसी भी प्रकार का कोई प्रतिबंध नहीं था। उसके आवभगत का पूरा इंतजाम किया गया था। एक ओर जहाँ पूरे गाँव में मांस, मछली, मदिरा आदि पर प्रतिबंध लगा हुआ था वहीं दूसरी ओर भगत का भोजन एक कुंवारी लड़की बनाती थी। उसके भोजन में बढ़िया किस्म का चावल और मुर्गा रहता था और भगत दिन भर नशे में धुत रहता था। उसके पहरेदार की भै यही स्थिति थी। ओझा रहस्यमय ढंग से लोगों से बातें करता। गाँव के हर व्यक्ति उस ओझा की तरफ एक आशाभरी नजरों से देखता रहता कि शायद आज गाँव की डायन का पता लग जाय। लेकिन उनकी आशा धरी की धरी रह जाती। उसका कर्मकाण्ड इसी तरह चलता रहा। एक दिन उस भगत ने गाँव वालों को यह कहा कि आज प्रत्येक घर की औरतें अपने घर से एक पोटली में चावल बांधकर और उसपर अपना नाम लिखकर ओझा के पास लायेंगी। उन सभी चावल की पोटलियों को एक बर्त्तन में डालकर पकाया जायेगा और जिसकी पोटली के चावल कच्चा रह जायेगा वही औरत डायन होगी। ओझा उन सभी पोटलियों में से उस औरत का नाम बता देगा जिसका चावल नहीं पका है। गाँव के सभी लोगों को यह विश्वास हो गया कि आज उक्त डायन का पर्दाफाश हो जाएगा जो गाँववालों को अपना शिकार बना रही है। इस बीच पूजा के दौरान ओझा सारे गाँव में घूम-घूम कर हर घर की स्थिति का जायजा ले चुका था कि किसकी स्थिति कैसी है। ओझा इस बात का निर्णय कर चुका था कि किसे अपना शिकार बनाना है जिससे प्रतिरोध का सामना भी उसे न करना पड़े।

अब आग पर बर्त्तन चढ़ाया गया और पोटलियों को उस बर्त्तन में डाल दिया गया। गाँव के किसी व्यक्ति ने यह जानने, पूछने की कोशिश नहीं की कि सारी पोटलियाँ डाली गई हैं या नहीं। गाँववालों का उस ओझा के ऊपर पूरा विश्वास था कि ओझा का जो भी निर्णय होगा वह सही ही होगा। अब सभी ग्रामवासी चावल पकने तथा बिना पके चावल की पोटली के बाहर निकलने और

ओझा द्वारा अमुक महिला को डायन करार दिये जाने का इंतजार करने लगे। गाँव वाले अज्ञानता के कारण यह भी नहीं जान पाये कि यदि सभी पोटलियों को पानी में उबाला जायेगा तब उन पर लिखा नाम मिट जायेगा। खैर, कुछ समय पश्चात् ओझा मोहन सिंह भगत ने यह घोषणा की कि गवरिया वाली का चावल नहीं पका। किसी ने घोषणा के पश्चात् यह देखा भी नहीं कि हकीकत क्या है, उसकी पोटली कहाँ गई? घोषणा करने के पश्चात् वह ओझा उस गाँव से भाग खड़ा हुआ।

गाँव वालों को विश्वास हो गया था कि वही औरत, जिसे ओझा ने डायन करार दिया है, गाँव में होने वाले सभी बीमारियों का कारण है। उसकी मृत्यु के पश्चात् ही गाँव वालों को हर तरह के कष्ट से मुक्ति मिल सकती है। जिस महिला को ओझा ने डायन करार दिया था उसकी उम्र लगभग 50 वर्ष थी, वह विधवा थी। अपने एक बेटे लोहरा मुण्डा के साथ रहकर अपना गुजर-बसर करती थी। कुछ वर्षों पहले भी उसी महिला, जो गवरिया की रहने वाली थी, को ओझा ने डायन करार दिया था, कई तरह से बेइज्जत किया गया था। इस बार उसे डायन करार देने से गाँव वालों को उसके लक्षण पर भी शक होने लगा। चूंकि इस मामले में पुलिस अपना हस्तक्षेप कर चुकी थी अतः 20 दिनों तक जिन्दा रहने के पश्चात उस महिला की लाश लावारिश रूप में सड़क के किनारे मिली। लोगों की अज्ञानता और अंधविश्वास की बलिवेदी पर एक और महिला को चढ़ा दिया गया।

डायन के संदर्भ में लोगों में जो अंधविश्वास व्याप्त है उस अंधविश्वास की बलिवेदी पर अनेक महिलाओं को चढ़ाया जा चुका है। उन्हीं प्रताड़ित महिलाओं में से एक महिला रूकनी भी है। 70 वर्षीय विधवा रूकनी पर भी डायन होने का आरोप लगाकर उनके साथ अमानुषिक व्यवहार किया गया। रूकनी, बुधन धोबी की विधवा है जो कोडरमा जिले के वृंदा गाँव में रहती थी। उसका एक पुत्र भी है। पति की मृत्यु के पश्चात् गरीबी के कारण वह अपनी आजीविका चलाने के लिए लोगों से माँग कर कुछ पाने के उद्देश्य से बंधन महतो के घर गयी। वहाँ बंधन की बहू की तबीयत और खराब हो गयी। आस-पास के लोगों ने बंधन को समझा दिया कि रूकनी डायन है। उसने तुम्हारे घर में टोना कर दिया है। इसके बाद उसे घर से निकाल कर बहुत मारा-पीटा गया। उसे तरह-तरह से प्रताड़ित किया गया। यहाँ तक की चप्पल पर थूक कर उसे चटाया गया। इतना प्रताड़ित करने के बाद भी लोगों को संतुष्टि नहीं हुई। वह बेसहारा महिला

लोगों के सामने अपने निर्दोष होने तथा लोगों से अपनी मदद करने की गुहार करती रही, परन्तु किसी ने उसकी सहायता नहीं की। लोगों के बीच यह अंधविश्वास है कि अगर किसी डायन महिला को मल-मूत्र पिलाया जाय तो उसकी डायन विद्या समाप्त हो जाती है। इस बात के ध्यान में आते ही लोगों ने पेशाब और पखाना (मल) घोल कर रूकनी को पिलाया। इससे बढ़कर प्रताड़ना और क्या हो सकती है? इतना प्रताड़ित करने के बाद उसे ओझा के पास ले जाया गया ताकि ओझा तंत्र-मंत्र, झाड़-फूंक द्वारा उसकी विद्या को समाप्त करे। ओझा ने इसके लिए उससे अरवा चावल, सिंदूर, मुर्गा मंगाया और झाड़-फूंक का दौर शुरू हुआ। रात भर उसे कमरे में बंद कर पीटा गया। हर प्रकार से प्रताड़ित करने के बाद उसे छोड़ दिया गया। आज भी वह महिला डायन होने का आरोप अपने माथे पर लिए, हर किसी की नफरत भरी नजरों को बर्दाश्त करते हुए जी रही है।

राँची जिले के बुंडू के चिटोडीह गाँव की दो महिलाएँ धरमा महतो की पत्नी रजनी देवी और लगनू महतो की पत्नी सजनी देवी पर डायन होने का आरोप लगाया गया। इनका साथ एक दूसरे ओझा प्रीतम सिंह मुण्डा ने दिया। इन दोनों ओझाओं ने गाँव वालों के सामने उनके परिवार के लोगों पर भी डायन का बेटा आदि होने का आरोप लगाया। ओझा ने मुर्गे की बलि चढ़ायी और रजनी देवी व सजनी देवी के साथ उनके परिजनों को मुर्गे का खून पिलाया। इस प्रकार अनेक अपमानजनक घटनाएँ उनके साथ होती रहती हैं और ये सब उन्हें सहना पड़ता है।

तृतीय अध्याय

अधंविश्वास क्यों?

समाज में डायन के प्रति विश्वास की धारणा चिरंतन काल से चली आ रही है और समय-चक्र के साथ अपनी जड़ को मजबूत करती आ रही है। एक शब्द में वह और कुछ नहीं, बल्कि लोगों के मन का भ्रम है, जो अब अंधविश्वास के रूप में अपना विस्तार कर रहा है। प्राचीन-काल से ही लोगों के मन में यह बात रही है कि अगर बिल्ली रास्ता काट दे या सामने कोई छींक दे तो अनर्थ हो सकता है या कोई दुर्घटना हो सकती है। इसी बात पर विश्वास करते हुए लोग आज भी या तो कुछ देर रुक जाते हैं या अपना रास्ता बदल देते हैं। समाज में आज भी बहुत-सी इस तरह की घटनाएँ होती हैं जिन्हें अंधविश्वास के अलावा और कुछ नहीं कहा जा सकता है। जैसे ताबीज, अँगूठियाँ आदि पहनना, बच्चों को काला टीका लगाना, दुकान के दरवाजे पर नींबू टांगना आदि ऐसी दर्जनों प्रचलित विश्वासों को मानने वाले लोगों की आज भी कमी नहीं है। इन घटनाओं पर समय-समय पर विवाद और तर्क भी होते रहे हैं कि आखिरकार इन विश्वासों का स्वरूप क्या है या इसके पीछे क्या कोई वैज्ञानिकता छिपी है?

सायकॉलाजी ऑफ सुपर्स्टीशन (Psychology of Superstition) पुस्तक के लेखक और प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक प्रो. जी. जहोदा ने मानवीय सोच और इन्द्रियों से प्राप्त ज्ञान के सामंजस्य में कुछ चारित्रिक विशेषताओं के बारे में बताया है। इस उपलब्धि से उसे आत्मिक संतोष मिलता है। जब भी कोई घटना व्याख्या से परे प्रतीत होने लगती है तो वह आतंकित होने लगता है और अपने मन की संतुष्टि के लिए कोई न कोई चरित्र, कारण गढ़ लेता है।

प्रो. जी. ब्रानोवस्की कहते हैं - जब अनुभूतियों को व्यक्त करने के लिए भाषा नहीं था, जब हमारे पास रासायनिक सूत्र नहीं थे तब कर्मकाण्डों की मदद से ही घटनाक्रमों और तत्कालीन ज्ञान को याद रखने का काम किया जाता था। ये ही कर्मकाण्ड अब जादू-टोना, झाड़-फूंक आदि के रूप ले चुके हैं। इन्हें बुद्धिजीवी अंधविश्वास की संज्ञा देते हैं। लेकिन ये अंधविश्वास कितने पुराने हैं, इसके बारे में निश्चित तौर पर कह पाना थोड़ा कठिन है। इतना निश्चित ही कहा जा सकता है कि यह बिल्कुल असभ्य जीवन और अत्याधुनिक आडम्बरयुक्त

जीवन-शैली के बीच की है। आधुनिक भाग-दौड़ भरी तेज जिन्दगी में ऐसी बातों के लिए सामान्य व्यक्ति को समय नहीं मिल पाता और आदिम-युग के मानव को इसकी समझ थी कहाँ?

डायन-प्रथा के संदर्भ में प्रकाशित पुस्तकों, पत्रिकाओं, धर्मशास्त्रों के प्रसंगों और बड़ी संख्या में घटी घटनाओं के अध्ययन और विश्लेषण से ऐसा लगता है कि डायन के प्रति जो लोगों में विश्वास है वह मात्र अशिक्षा से जुड़ा मामला नहीं है। क्योंकि पढ़े-लिखे और सभ्य समझे जाने वाले लोग भी ऐसी घटनाओं में सम्मिलित पाए जाते हैं जिन्हें अंधविश्वास की संज्ञा दी जा सकती है। समाज में जो उच्च शिक्षित वर्ग इंजीनियरों या डॉक्टरों का है वह भी अपनी मनपसंद नौकरी या पोस्टिंग के उद्देश्य से किसी न किसी चमत्कार के चक्कर में कोई अंधविश्वासी साधन अपनाने से नहीं हिचकते हैं। अध्ययन के दौरान देखने में यह भी आता है कि शिक्षित महिलाएँ भी बुरी नजर से अपने बच्चे को बचाने के लिए काले धागे या काले टीके के प्रयोग से परहेज नहीं कर पातीं। जब समाज के आधार-स्तंभ समझे जाने वाले लोग भी अंधविश्वास का सहारा लेने लगे हैं तो अशिक्षित पिछड़े ग्रामीणों-जनजातियों की स्थिति क्या होगी कल्पना की जा सकती है।

समाज में जो भी घटनाएँ डायन, ओझा आदि के संबंध में प्रदर्शित होती है यदि उन सभी का वैज्ञानिक ढंग से विश्लेषण किया जाय तो ये सभी मंत्र, ओझाई, जादू-टोना, डायन के पास जिस शक्ति का वे प्रदर्शन करते हैं अगर यह सच होते तो समाज का सारा नेतृत्व उन्हीं के हाथों में रहता और इन आधुनिक अस्त्र-शस्त्रों का कोई औचित्य ही नहीं रह जाता। लेकिन सच तो यह है कि इनका प्रभाव मात्र एक भ्रम है जो लोगों के मन-मस्तिष्क में घर कर गया है। जनजातीय समाज में अगर किसी व्यक्ति को साँप काट लेता है तो फौरन ओझा के पास झाड़-फूंक के लिए ले जाया जाता है। क्योंकि ग्रामीणों का मानना है कि झाड़-फूंक के बाद ही साँप का विष उतरता है और आदमी ठीक हो जाता है। आज विज्ञान की मान्यता है और सांपों के प्रकार के विश्लेषण से यह बात सामने आयी है कि अधिकांशतः साँप विषधर नहीं होते हैं। परन्तु मात्र साँप के काटने पर उसके भय के व्यक्ति अचेत हो जाता है। इसके अलावा ओझा, जो अपना चमत्कार दिखाकर सीधे-साधे ग्रामीणों को अपने वश में कर अपनी अपार शक्ति का प्रदर्शन करते हैं, वे प्रदर्शन भी विज्ञान के ही चमत्कार हैं। ओझा यदि पोटाशियम परमैंगनेट के ऊपर घी छिड़क कर उससे धुआं निकालते हैं और साथ

में कुछ मंत्रों का उच्चारण करते हैं और ग्रामीणों को ये बताते हैं कि उनके पास जो दिव्यशक्ति है उसी शक्ति के कारण ऐसा हो रहा है जबकि ये साधारणतः एक रासायनिक प्रतिक्रिया है। देश-विदेश के बड़े-बड़े जादूगरों का भी यह मानना है कि जादू-मंत्र आदि नहीं होता, जादू तो हाथ की सफाई, वैज्ञानिक उपकरणों पर आधारित खेल मात्र होता है। धर्मशास्त्रों की चर्चा के अनुसार पारलौकिक शक्तियाँ सिद्ध-पुरुषों को मिलती थी, परन्तु आज वैज्ञानिक खोजों और उपकरणों की मदद से कई दुर्लभ बातें सुलभ हो गई हैं जिन्हें पहले चमत्कार समझा जाता था। प्रक्षेपास्त्र, रिमोट कन्ट्रोल, इन्टरनेट आदि के युग में डायन, ओझा आदि की बातें आज अप्रासंगिक लगती हैं। लेकिन प्रश्न यह उठता है कि जब दुनिया की दूरी सिमटती जा रही हैं तब ऐसे में 'डायन' आदि को मानने वाले लोग क्यों हैं? इस प्रश्न का एक सरल उत्तर यह भी हो सकता है कि सदियों से जो अंधविश्वास या रूढ़ियाँ जनजातियों के मानस-पटल के अवचेतन मन में गहराई से जड़ जमा चुकी है - बचपन से ही अपने बड़े-बुजुर्गों के मुंह से सुनी सुनायी गोपनीय व रहस्यमयी जिज्ञासापूर्ण बातें उम्र के साथ बढ़ कर जवान होती हैं और लोगों के दिलोदिमाग पर इस कदर कब्जा जमा लेती हैं कि वे उनके जीवन का अंग बन जाती हैं।

चतुर्थ अध्याय

डायन बनने की दीक्षा

वाममार्गी धार्मिक विचारधारा से उत्पन्न विधि-विधानों निकृष्ट अनुष्ठानों व कर्मकाण्डों से मिलती-जुलती शवोपासना, कापालिक अनुष्ठानों की भांति ही कर्मकाण्ड डायन बिसाही को करने पड़ते हैं। इसके अन्तर्गत एक ढाई कड़ी का मंत्र होता है, जिसे 'अढैया' कहा जाता है, उसे अपने गुरु से ग्रहण करते हैं। दीक्षित होने की अवधि में प्रतिदिन वे ब्राह्ममुहूर्त के पूर्व लोटा में पानी भर कर शौच के लिए जाते हैं तथा शौचादि से निवृत्त हो किसी निश्चित बेर के कुंआरे पौधे में जल डालकर कथित ढाई कड़ी का मंत्र का जाप करते हैं और निकृष्ट प्रेतात्माएँ उनकी ओर आकर्षित होकर उन्हें डराने का प्रयत्न करती हैं। यदि वह साधक उक्त चुड़ैल और प्रेतात्माओं से डरे बिना साधना जारी रखता है तब उसे सिद्धि हासिल होती है। वह साधन उपयुक्त प्रेतात्माओं को वश में लाकर उनपर शासन करता है। ये प्रेत इस डायन या बिसाहे की कुत्सित इच्छाओं का पालन करते हैं।

शक्तिशाली डायन व बिसाहा बनने के लिए साधना की कठिन व जटिल प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। यह विद्या घर या बाहर दोनों में कहीं भी सीखी जा सकती है। इस विद्या को गुप्त रूप से सुनकर रटना या अभ्यास करना पड़ता है। शरीर और मन को शुद्ध करना पड़ता है। गुरु के आदेश पर त्याज्य वस्तुओं के उपयोग को त्यागना पड़ता है। आदिवासियों के मंत्रों में कई भाषा का संसर्ग इस अवधि में हुआ है। मंत्र सीखने का इच्छुक व्यक्ति शाम को खेती यानी बाहर के काम को समाप्त करने के पश्चात् गुरु-आंगन में जाता हैं। चूंकि यह मंत्र कहीं भी लिखित रूप में नहीं है इसलिए शिष्यों का गुरु की शरण में जाना आवश्यक है। शिष्यों के आने के बाद गुरु उनके सामने बैठ जाते हैं और मंत्र का उच्चारण करते हैं। गुरु के द्वारा बोले गये मंत्रों को शिष्य दुहराते जाते हैं। इस विद्या के तहत सबसे पहले गुरुमंत्र सिखलाया जाता है। इसके पश्चात् अन्य मंत्र। गुरु अपने इच्छानुसार शिष्यों को मंत्र सिखलाते हैं। शिष्यों में जो सबसे तेज एवं प्रवीण होता है उसे गुरु पाठ-चेला चुनते हैं। गुरु की अनुपस्थिति में पाठ-चेला नये-नये शिष्यों को मंत्र सिखलाता है।

एक प्रचलित विश्वास के अनुसार कार्तिक अमावस्या की भयानक काल-रात्रि के गहन सन्नाटे में डायनों की काली दीक्षा-विधि प्रारंभ होती है। तारे, नक्षत्र,

वायु, पेड़-पौधे, सियार, उल्लू और चमगादड़ भी मानो इस सन्नाटे से भयाक्रांत हो हृदय थाम लेते हैं। इस निस्तब्धकारी सन्नाटे में डायनें सुनसान श्मशान में उपस्थित हो आपादमस्तक नग्न शरीर में पुराने झाड़ू का लहंगा लपेट कर खोपड़ी का दीया जलाकर भयानक मंत्रोच्चारण के साथ कालभैरवी की भांति नृत्य करती हैं।

इन डायनों की गुरुआइन बलिपशु या काले मुर्गे का रक्त तर्पण करती हुई डायन-विद्या देती है और इसी क्रम में डाकिनियाँ, पिशाचिनी एवं ब्रह्मपिशाच अनेक रूप धारण कर, विकराल मायावी आकृतियों से नौसिखुआ डायनों को भयभीत कर दीक्षा भ्रष्ट करने का प्रयास करती है। इसके पश्चात् गुरुआइनें प्रश्न पूछती हैं - 'कोड़ी पासा सहबे की टाँगा पासा सहबे'। अर्थात् कुदाल टाँगे की मार सहोगी या भेद उगल दोगी। नौसिखुआ डायन उत्तर देती है - सब गुरुआइन सहब, सहब, सहब और इस तरह पूरी होती है डायनों की गुप्त विद्या। एक आम धारणा यह है कि कथित सिद्ध डायनें मंत्रबल से किसी शिशु का कलेजा निकाल कर खा सकती हैं। इसी भय से माताएँ कार्तिक अमावस्या की रात को अपने नौनिहालों की नाभि में चुपचाप तेल चुपड़ (लगा) देती हैं।

कहा जाता है कि ये डायनें अपनी गुप्त विद्या का परीक्षण किसी हरे-भरे पेड़, पशु अथवा व्यक्ति पर करती हैं। यदि कोई हरा-भरा पेड़ उनकी विद्या की शक्ति से मर जाता है या सूख जाता है तो उन्हें आधी डायन माना जाता है। परन्तु यदि वे अपनी इस विद्या के बल से सूखे हुए पेड़ या मरे हुए शिशु को पुनः जीवित कर देती हैं तो उनकी विद्या पूर्ण हो जाती हैं और वे पूर्ण डायन मानी जाती है। काली विद्या की निपुण साधक-साधिकाएँ अपने मौखिक अभिशाप, नजर-गुजर, कुदृष्टि से अथवा मारनवाण, नासनवाण, रोगवाण, अग्निवाण से उपद्रव मचा सकती हैं। इन डायन-बिसाहों के पास किसी मृत व्यक्ति के अभिमंत्रित बाल, नाखून, चूजे की हड्डियाँ उड़द या सरसों के काले दाने होते हैं। जिन्हें मंत्रोच्चार कर बायीं एड़ी से घूमाकर, ऐड़ी से धूल मिलाकर उक्त किसी एक सामग्री को लक्षित व्यक्ति की ओर फेंककर इच्छित क्षति पहुँचा सकती हैं।

जब इनकी विद्या पूर्ण हो जाती है तब गुरुआइन अपनी शिष्या से गुरु-दक्षिणा की माँग करती है। गुरु-दक्षिणा के तहत वे अपनी शिष्या से पूछती हैं - 'कोख देबे की माँग देबे'। अर्थात् अपने कोख से उत्पन्न अपने बड़े पुत्र को मार कर दान दोगी या अपने पति को मारोगी। इसके पश्चात् नौसिखुआ डायन दोनों में से जिसे ठीक समझती है उसे 'हाँ' करती है। यह इनकी पूर्ण और सफल परीक्षा

मानी जाती हैं। इसके बाद जब चाहें कुछ साल के अंतराल में अपने किसी कार्य की सिद्धि के लिए गाँव या परिवार के किसी व्यक्ति को मार डालती हैं, जिसे नाश कर मार डालना कहा जाता है।

डायनों के बारे में लोगों की यह भी मान्यता है कि डायनें अपना विद्या का प्रयोग किसी 7(सात) घर को छोड़कर के ही करती हैं अर्थात् उन सात घरों में डायनें अपनी विद्या का प्रयोग नहीं करती हैं। डायनें अपनी विद्या के प्रसार के लिए अपने उत्तराधिकारी की नियुक्ति करती हैं। इसके लिए वे अपनी किसी चहेती बेटी या बहू को अपनी उत्तराधिकारी बनाती हैं। यदि बेटी या बहू ये न सीखना चाहे तब ऐसी स्थिति में वे छल से या धोखे से किसी महिला की पीठ पर ये विद्या थोप देती हैं। इस तरह की डायनें 'थापल डायन' कहलाती हैं। यदि कोई स्त्री यह जापती है कि अमुक महिला डायन है ऐसी स्थिति में कोई उससे पीठ नहीं मलवाती हैं क्योंकि उन्हें भय रहता है कि डायन विद्या उसमें न आ जाय। इसके अलावा यह बात भी प्रचलित है कि डायन यदि अपनी बहू या बेटी के हाथ में थूक दे तो डायन या बिसाहा का गुण उसमें हस्तांतरित हो जाता है।

इस विद्या को भ्रष्ट करने का उपाय बताते हुए सूचनादाताओं ने बताया है कि साल के पत्ते की प्लेट में खाना या किसी भी रूप में आदमी का मैला खिला देने से यह विद्या भ्रष्ट हो जाएगी।

डायन एक ऐसा घिनौना शब्द है जो किसी पर लागू कर देना तो आसान है, लेकिन उसको फिर लौटा लेना संभव नहीं है। डायन चिह्नित करने के पीछे वे लोग ही होते हैं जो डायन बताकर स्त्रियों को नीचा दिखा कर उनकी संपत्ति हड़पना, यौन व्यभिचार के लिए व्यवहृत या उपयोग करना चाहते हैं। इसके पीछे योग और तंत्र का कोई मेल नहीं पाया जाता है। डायन चिन्हित करने के पीछे कोई सांस्कृतिक-व्यवहार का मूल्य-बोध नजर नहीं आता है, बल्कि इसके पीछे एक षडयंत्र, निहित स्वार्थ-बोध, अंधविश्वास, मनोवैज्ञानिक कमजोरी आदि कारक हैं तथा ओझाओं द्वारा अपने दोष को छुपाने के लिए निरीह कमजोर महिलाओं को रहस्यमयता के घेरे में लेकर उन्हें अपना शिकार बनाया जाता है।

डायन का कुप्रभाव :

डायन-विद्या एक ऐसी अनिष्टकारी विद्या है जो प्रायः बुरे कार्यों के लिए ही प्रयुक्त होती है। जहाँ तक लोगों का विश्वास है कि डायनें अपनी विद्या का प्रयोग कभी भी अच्छे या हितकारी कार्यों के लिए नहीं करती हैं। उनका उद्देश्य

हमेशा लोगों के अहित का ही रहता है। उनकी इस अनिष्टकारी प्रवृत्ति के कारण ही उनको या उनकी इस विद्या को लोग हेय दृष्टि से देखते हैं। चूंकि डायनों का प्रयोजन ही बुरा होता है इसलिए इस प्रयोजन का कुप्रभाव समाज पर लोगों तथा पास-पड़ोस पर पड़ना अवश्यंभावी ही है। डायन रूपी महिला जहाँ भी जाती है, अपने कुप्रभाव की छाया वहाँ छोड़ती है। वह अपना ज्यादातर प्रभाव नवजात शिशुओं, गर्भवती या प्रसूति महिलाओं, पशुओं तथा हरे-भरे पौधों पर डालती है। डायने ये सभी घृणित, असामाजिक कार्य अपनी स्वार्थ-सिद्धि के उद्देश्य से ही करता हैं। इन स्वार्थों की सिद्धि हेतु वे प्रेतात्माओं को अपने वश में करती हैं और अपने घृणित, हीन वांछित कार्य की सिद्धि करती हैं।

अध्ययन के दौरान सूचनादाताओं ने बताया कि डायन किसी भी व्यक्ति या पशु को हानि पहुँचा सकती है। इस कार्य की पूर्ति में उनके देवता दाड़िबोंगा उनका साथ देते हैं। दाड़िबोंगा डायनों के साथ मिलकर नवजात शिशुओं, गर्भवती महिलाओं, प्रौढ़, रोगग्रस्त व्यक्ति किसी पर भी आक्रमण करते हैं। पहले तो उनसे प्रभावित व्यक्ति काफी बीमार पड़ जाता है। आक्रांत व्यक्ति पर किसी प्रकार की दवा का कोई असर नहीं पड़ता है। लोगों का यह मानना है कि तत्काल ऐसे रोगी को ओझा, सोख, भगत आदि के पास ले जाकर झाड़-फूंक न करवाया गया तो उनकी मृत्यु भी हो जाती है। इस प्रकार के रोगियों का फायदा ओझा, भगत उठाते हैं और उनके रोग को मुक्त करने का दावा कर रोगी के परिवारजनों से मोटी रकम वसूल लेते हैं। एक तरफ तो डायनों की वजह से ओझाओं, भगतों और सोखाओं की आमदनी होती है और दूसरी तरफ रोगी के परिवारजनों को काफी आर्थिक परेशानी का सामना करना पड़ता है। कहीं-कहीं लोगों का यह भी मानना है कि डायनों के प्रभाव के कारण गाँव में महामारी फैलती है, कोई दुर्घटना होती है, किसी की अकाल मृत्यु हो जाती है। इन्हीं के प्रभाव के कारण पशुओं की अचानक मौत हो जाती है, फसल आदि बर्बाद हो जाती है। इन सभी घटनाओं को कुप्रभाव समाज के लोगों पर पड़ता है। उनके सहज जीवन में उथल-पुथल मच जाती है, गाँव वालों का मन अशांत हो जाता है। अपने मन की शांति तथा इन सभी से मुक्ति पाने के लिए उन्हें ओझा, भगत आदि की शरण में जाना पड़ता है। ओझाओं की मनमानी इच्छाओं की पूर्ति करनी पड़ती है। शांति पाने के एवज में अपनी सम्पत्ति का बड़ा भाग, जो वे अपने जीवन को सुखद बनाने में खर्च करते, ओझाओं को देना पड़ता है। इससे ओझा, भगतों का प्रभाव समाज पर सुदृढ़ होता जाता है। समाज में

ओझाओं को अपना पैर फैलाने का अच्छा मौका मिल जाता है।

समाज का वही वर्ग जो इनके कुप्रभावों से अनभिज्ञ हैं, जिसका मन कोमल है, जिसमें किसी प्रकार की असंगति, कुरीतियों का समावेश नहीं हो पाया वह वर्ग बच्चों का है। उन बच्चों के कोमल मन में भी इस डायन-प्रथा के कारण उनके अंग्रेजों द्वारा भय और आशंका का वातावरण रच दिया जाता है। उनके मन में भी ये कुसंस्कार जादू-टोने, झाड़-फूंक, भूत-प्रेत आदि के अस्तित्व गड़ जाते हैं। बड़ा होने पर उनके अंदर जमा अंधविश्वास का रूप ले लेता है जिसे दूर करना बड़ा ही कठिन काम है। ये अंधविश्वास बड़े होने पर उनके मन-मस्तिष्क में इस प्रकार रच-बस जाते हैं कि वो उनके जीवन का अभिन्न अंग बन जाते हैं। ये सारे डायन-प्रथा के कारण ही होती है।

डायन-प्रथा के कारण ही समाज के एक बहुत बड़े हिस्से में महिलाओं की हत्या का सिलसिला जोर पकड़ चुका है। जनजातीय समाज में इस प्रकार की हत्याओं की संख्या में दिन-प्रतिदिन वृद्धि हो रही है। इस क्षेत्र में जब लोग आपसी झगड़े या किसी अन्य कारण से परिवार को नुकसान पहुँचाना चाहते हैं तो उस परिवार की किसी महिला सदस्य को डायन करार देते हैं और ऐसा कर उक्त महिला को प्रताड़ित किया जाता तथा सामूहिक हत्या कर दी जाती है। और कई ऐसे मामले समाज में देखने को मिलते हैं जिसके अंतर्गत किसी महिला को डायन करार देने के पश्चात् उसके सारे परिवार वालों की हत्या उसके साथ ही साथ कर दी जाती है। ऐसे मामलों में जब पुलिस अनुसंधान शुरू करती है तब इस स्थिति में गाँव के सभी लोग इस घटना के प्रति अनभिज्ञता जाहिर करते हैं या कह देते हैं कि वो महिला डायन थी जिसकी गाँव वालों ने हत्या कर दी और मामला वहीं रफा-दफा हो जाता है। इस प्रकार समाज के सभी लोग मूक दर्शक बने रहते हैं और अप्रत्यक्ष रूप से इस जघन्य अपराध में शामिल होकर इस प्रकार की हत्या को प्रश्रय एवं बढ़ावा देते हैं।

डायन बनने की परिस्थितियाँ :

अब प्रश्न उठता है कि महिला/पुरुष डायन या बिसाहा क्यों बनती/बनते हैं? जबकि डायन बनने पर उनको अपने पति या बेटी/बेटा खोना पड़ता है। साथ ही इस विद्या के लिए भयानक और क्रूरतम तथा जघन्य से जघन्य कृत्य करना पड़ता है। क्या कोई समाज विरोधी क्रूर व्यक्ति निजी स्वार्थ के लिए विशेष प्रलोभन देकर डायन बनने के लिए प्रेरित करता है? कहा जाता है कि

गुरु या गुरुआइन कभी-कभी प्रशिक्षु डायनों की जान भी माँगती हैं। ये बातें हमें सोचने पर विवश करती है कि आखिर कोई महिला अपनी इच्छा से ऐसी भयानक तथा समाज-विरोधी कार्य करना क्यों पसंद करती है? निश्चित रूप से इसके पीछे पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक शोषण रहा होगा। जब कोई स्त्री अपने घर-परिवार या समाज में सभी तरफ से पीड़ित होती तथा अत्याचार सहती है तो दुराचारी शक्तियों तथा अपने या परिवार पर हुए अत्याचार का प्रतिशोध लेने के लिए इस क्रूर विद्या को सीखने के लिए दुष्प्रेरित होती होगी कि वह डायन-विद्या के सहारे अपने परिवार/समाज की समृद्धि या विकास नहीं कर सकती, लेकिन वह प्रतिरोध की ज्वाला में अपना आपा खोकर यह विद्या सीखती है और एक दिन ऐसा भी आता है जब गाँव वाले या घर-परिवार वाले उसे डायन पहचान कर मार डालते हैं और वह जिस तथाकथित शक्ति को वश में कर लोगों से बदला लेने का कार्य करती थी वह शक्ति भी उसका साथ नहीं दे पाती। परिणामतः उस डायन को अपनी जान तक से हाथ धोना पड़ता है।

क्षेत्रीय अध्ययन के दौरान सूचनादाताओं द्वारा दी गई सूचना के आधार पर यह बात सामने आयी है कि अगर किसी विवाहिता स्त्री का पति/बेटा या बेटी की मृत्यु अस्वाभाविक या असमय - अकारण हो जाती है तो उस स्त्री को जाने-अनजाने में समाज डायन के नाम से घोषित कर देता है। भले ही उन लोगों के मरने का कोई प्राकृतिक कारण रहा हो, लेकिन जन-सामान्य उस दुःखी स्त्री, जो अपने प्रिय लोगों को खोकर पहले से ही दुःखी रहती है, उसको डायन से विभूषित कर उसके दुःख को दोगुना कर दिया जाता है। समाज में वह घृणा की दृष्टि से देखी जाने लगती है तथा एक उपेक्षित जीवन जीने लगती है। ऐसी परिस्थिति में वह भी 'डायन' सुनते-सुनते बाध्य होकर डायन-विद्या सीखती है ताकि जन सामान्य से अपने ऊपर लगे इस झूठे आरोप का बदला ले सके।

ऐसा भी पाया गया कि ग्रामीण या जनजातीय क्षेत्रों में कमजोर और प्रतिरोध न कर पाने वाली या किसी परिवार से मनमुटाव की स्थिति में महिला को डायन करार दिया जाता है। विधवा, असहाय और गरीब औरतों को डायन या बिसाही का झूठा आरोप लगाया जाता है। इसका मतलब यह भी नहीं कि उपरोक्त सभी औरतों को डायन/बिसाही घोषित कर दिया जाता है। किसी भी पढ़ी-लिखी सम्पन्न घर की बहू-बेटी को गाँव के लोग शिक्षित होने के कारण या समाज के दबंग या मठाधीश परिवार का होने के कारण उनको ओझा-डायन घोषित नहीं करता है। जबकि अनपढ़, असहाय, कमजोर वर्ग की महिलाएँ ओझा के

इस कुआरोप का विरोध नहीं कर पातीं और गाँव समाज में प्रताड़ित होती तथा अत्याचार सहती रहती हैं।

कभी-कभी किसी कमजोर स्त्री, जो धन एवं जमीन आदि सम्पत्ति से सम्पन्न है, की सम्पत्ति हड़पने के ख्याल से भी लोग मति, ओझा या भगत से साठ-गांठ कर उसे जबरन डायन या बिसाही घोषित करार देते हैं।

इस तरह उसे जान से मारने की पृष्ठभूमि बनाते और स्वार्थ पूरा करते हैं। उस महिला की हत्या करने के पश्चात् उसकी धन-सम्पत्ति हड़प लेते हैं।

कुछ वरिष्ठ डायनें अपने नजदीक की औरतों को बहला-सिखला कर धोखे से डायन विद्या सीखने को बाध्य करती होंगी ताकि उनकी जैसी बुरी जमात की संख्या बढ़ सके। कुछ औरतें कभी-कभी ये विद्या शौकिया भी सीखती हैं जिससे उनकी शक्ति समाज में बढ़ जाये और वे अन्य औरतों से भिन्न नजर आयें।

तंत्र-विद्या सीखने और सिखाने की परम्परा भारत में ही नहीं, सारे संसार में प्रचलित है। तंत्र के दो भाग हैं - विद्यामाया और अविद्यामाया। विद्यामाया तंत्र की वह विद्या है जिसमें सात्विक रूप से अलौकिक शक्तियों की आराधना की जाती है। इसके विपरीत अविद्यामाया तंत्र में डायन की शिक्षा आती है। अविद्यामाया तंत्र के द्वारा जो शक्ति हासिल होती है वह त्वरित होती है। किन्तु अविद्यामाया तंत्र-तांत्रिक को पतन की ओर ले जाती है, क्योंकि वह अशुभ का पृष्ठपोषक हैं। यह बात इस उदाहरण से स्पष्ट होगा कि योग और तंत्र मानसिक व्यायाम है और उनका आधार है 'स्वनिर्देशन' (Auto Suggestion) जो सम्मोहन का सूक्ष्म रूप है। योग या तंत्र में एक ही पद्धति का आधार है, वह है कि आप खुद को सत, चित् आनन्द का हिस्सा सोचते हैं और वैसे एक मंत्र को, जो चेतन तत्व में आपको समाहित करे, आप स्थापित होना चाहते हैं। मन का ऐसा संचालन संपूर्ण शुभु संपूर्ण आनन्द और सत्व की ओर होने से परिमार्जित होकर उस व्यायाम से शुद्ध होकर पारदर्शी होता है- मन निर्मल और अहंकार रहित होता है। क्योंकि जैसा आप सोचिएगा वैसा ही आप बनियेगा। इस तरह जैसे शरीर के व्यायाम से शरीर पुष्ट होता है अब अगर मन के व्यायाम से मन को पुष्ट करके आप मन का यानी बुद्धि को किसी को बर्बाद करने की दिशा में लगाइएगा तो आप अपनी बुद्धि से निपुण चोर, निपुण फरेबी बन सकते हैं। योग और तंत्र (योग के अंतर्गत दार्शनिक पक्ष ज्यादा है, इसमें प्रयोग कम होता है, जबकि तंत्र के अन्तर्गत प्रयोग पक्ष ज्यादा है इसमें प्रयोग कम होता है, जबकि तंत्र के अंतर्गत प्रयोग पक्ष गहरा

होता है, दार्शनिक पक्ष गुरु-शिष्य परम्परा पर आधारित होता है, इसलिए तंत्र बिना प्रशिक्षण और प्रशिक्षक के संभव नहीं है। योग बिना प्रशिक्षक के संभव है। तंत्र ज्यादा वैज्ञानिक है और योग के तहत बौद्धिक तत्व का चिन्तन ज्यादा है) से जो उपलब्धि प्राप्त होती है उसका पहला लाभ बुद्धि तत्व को जाता है और बुद्धि उनमें से अच्छे और बुरे का फर्क हमें अच्छे या शुभ कार्य की ओर संचालित करती है और अंततः जब साधक की बुद्धि केवल शुभमय हो जाती है तब वह साधक विवेकवान् बुद्धि का आदमी कहलाने लगता है। जब बुद्धि शुद्ध हो जाती है तब बुद्धि निष्कलुष, निरहंकारी तथा पारदर्शी हो जाती है फलस्वरूप आदमी बोधि या बोधिसत्व को प्राप्त करता है।

उपरोक्त सारी बातें बुद्धि के विषय में कही गयीं उनसे तात्पर्य यह होता है कि हर व्यक्ति के पास समान क्षमता होती है। वह उस क्षमता का उपयोग किस दिशा में करता है वह उस व्यक्ति की अपनी मानसिकता पर निर्भर करता है। यदि व्यक्ति अपनी बुद्धि को रचनात्मक कार्य में लगाता है तो इनसे परिवार, समाज, राष्ट्र सभी को लाभ होता है, परन्तु यदि व्यक्ति उसी बुद्धि को विनाशक कार्य में लगाता है तो इससे सभी को हानि पहुँचती है। अगर किसी व्यक्ति को बार-बार यह कहा जाय कि तुम बहुत बुरे हो, तुम कोई अच्छा कार्य नहीं कर सकते, इसके लिए हर तरफ से उसे उलाहना सुननी पड़ती है तो अंत में यही होता है कि उस व्यक्ति की मानसिकता में परिवर्तन आ जाता है। उसे स्वयं भी यह अनुभव होने लगता है कि वह कोई रचनात्मक कार्य नहीं कर सकता और अपनी सारी बुद्धि को विनाशक कार्य में, दूसरों को नुकसान पहुँचाने, प्रताड़ित करने में लगाएगा। यदि इसके विपरीत उस व्यक्ति को प्रोत्साहित किया जाय कि वो अच्छा काम भी कर सकता है तो धीरे-धीरे उसकी मानसिकता में परिवर्तन होगा और वह समाज के पक्ष में सदुपयोगी काम करने लगेगा। यही बात डायनों और डायन-विद्या सीखने वालों के साथ होती है। शुरू से ही उनको समाज में हेय दृष्टि से देखा जाता है। लोगों में यह धारणा बन गई है कि डायनें सदा दूसरों को हानि पहुँचाती हैं, वे कभी किसी को कोई लाभ नहीं पहुँचा सकती हैं। परिवार, समाज में कोई आकस्मिक घटना घटती है तो उसका प्रत्यारोप डायनों पर ही होता है। जबकि अध्ययन के दौरान यह देखने को मिला है कि डायनों के पास ऐसी कोई अद्‌भुत शक्ति नहीं होती है जिससे वे दूसरे किसी की जान ले लें या कोई बीमारी फैलाएँ आदि, ये तो व्यर्थ ही उनके ऊपर लगाया आरोप होता है। सदा से ही लोगों की प्रताड़ना, उलाहना और हेय दृष्टि का सामना

करते-करते उनके मन में यह बात पनप जाती है कि उनका जन्म ही बुरे कार्यों के लिए हुआ है और अपने आप को इन सभी घटित घटनाओं का दोषी मान लेती हैं जो दोष उन्होंने किया ही नहीं है। डायनें कहाँ तक क्या कर सकती हैं इसको सम्मोहन के स्तर से देखा जाय तो यह ज्ञात होता है कि किसी भी तरह कोई भी काम नैतिकता के खिलाफ सम्मोहन विद्या से नहीं करवा सकतीं। न ही वे ऐसा खुद कर सकती हैं। इसलिए डायन-विद्या तो कुछ लोग सीख सकती हैं उस विद्या से किसी को हानि नहीं पहुँचा सकती हैं। लेकिन यह भी देखने में आया है कि मान ले - एक अत्यंत भंयकर आदमी है और किसी सम्मोहन कर्त्ता ने उसे बाध्य निर्देश दिया कि उसका अमुक भूत से अमुक जगह साक्षात्कार हो जाना संभव है। तब वह अपने मन में एक भूत की छवि बना लेगा और वह भूत उसके मन में पैदा होकर उसके सामने प्रकट हो जा सकता है। यह सारा उस व्यक्ति के मन का खेल या कल्पना है। उसी तरह डायन-विद्या से किसी कमजोर मन वाले व्यक्ति का डराया-धमकाया तो जा सकता है, लेकिन वह भी उस व्यक्ति की अपनी कल्पनाशीलता पर ही निर्भर करेगा। इस विचार पर कि डायन नहीं होती यह गलत है - डायन होती है जैसे डायन विद्या भी होती है," किन्तु यह केवल उसका प्रपंच है जो लोगों को बेवकूफ़ बनाते हैं।

पंचम अध्याय

ओझा द्वारा डायन की पहचान

अभी भी झारखण्ड के सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों में जब कोई बच्चा, युवा, वृद्ध महिला को कोई बीमारी होती है जो चाहे ऋतु परिवर्तन, कुपोषण, बदहजमी, शराब के अधिक सेवन से या किसी अन्य रोगाणु या जीवाणु से बीमार पड़ गया हो तो लगभग 90 प्रतिशत लोग तो जरूर गाँव के ओझा, भगत, मति के पास ही उनको ले जाते हैं। कुछ ओझा या मति निश्चित रूप से जड़ी-बूटी के अच्छे जानकार होते हैं तथा वे बीमारी से ग्रस्त रोगियों की चिकित्सा ठीक ढंग से कर लेते हैं, लेकिन उनके पास भी जब पुराने रोगी को दिखाते हैं तो संभावना इसी की अधिक रहती है कि वह रोग उनसे ठीक न हो पाए। ऐसी स्थिति में जब समाजसेवी ओझा रोगी को ठीक नहीं कर पाता है तब किसी अच्छे चिकित्सक से परामर्श लेने का सुझाव देकर अच्छा कार्य करता है।

तथाकथित ओझा जिनको थोड़ा-सा भी जड़ी-बूटी का ज्ञान है और रोगी ठीक हो जाता है तो ओझा के प्रति रोगी, रोगी के परिजनों तथा गाँववालों के मन में एक सद्भावना का उदय होता है, उस ओझा के प्रति उनका विश्वास और गहरा होता जाता है। इसके विपरीत अगर रोगी ठीक नहीं हो पाता है तो ओझा उसके परिवारजनों को यह विश्वास दिलाने का प्रयास करता है कि कोई न कोई डायन उस रोगी के पीछे है जिस कारण रोग ठीक नहीं हो पा रहा है। अब वह ओझा रहस्यमयता का जाल बुनता है। वह सीधे किसी को आरोपित न कर पहचान की कुछ शर्तों को बतलाता है। जैसे वही औरत ऐसा की है जिसके घर की लम्बाई उत्तर-दक्षिण है, उसका दरवाजा पश्चिम की ओर है, घर के आंगन में एक पेड़ है, उस घर की औरत थोड़ा झुक कर चलती है तथा पीठ में घाव और आँखें टेढ़ी हैं। इस तरह कह कर ओझा अपनी साख भी रखता है और आगे के अर्थोपार्जन का रास्ता भी निकाल लेता है। साथ ही ओझा यह भी कहता है कि अगर रोगी को ठीक करना है तो डायन को वश में करना होगा। उसके लिए कुछ पूजा या कर्मकाण्ड भी करने होंगे।

ओझा या भगत को इस बात की पूर्ण जानकारी रहती है कि आपसी वैर, दुश्मनी या किसी तरह का मनमुटाव केवल अगल-बगल के घरों या गाँव के लोगों के बीच हो सकता है। जब ओझा के पास से लोग घर लौटते हैं और मन

ही मन इस तरह के घर और औरत के संबंध में पता लगाना शुरू करते हैं। संयोग से कोई घर कुछ उस तरह का मिल जाता है जैसा कि ओझा ने कहा था या कोई औरत वैसी मिल जाती है तो ऐसी स्थिति में उनका विश्वास और भी ओझा के प्रति पुख्ता हो जाता है कि ओझा ने ठीक ही कहा कि यह औरत डायन है, इसी की वजह से रोग ठीक नहीं हो पा रहा है। अगर कोई दूसरा ओझा या भगत भी कुछ इसी तरह की पहचान बतलाता है तब ऐसी स्थिति में उनकी बातों की पुष्टि हो जाती है। धीरे-धीरे यह बात पूरे गाँव और आस-पास के गाँवों में भी फैल जाती है और ऐसी औरतें डायन न होते हुए भी डायन करार कर दी जाती हैं।

अध्ययन के दौरान देखने में यह भी आया है कि कभी-कभी लंबी बीमारी या असाध्य रोग से ग्रस्त व्यक्ति अपने इलाज लिए ओझा के पास जाता है तब ओझा उस रोग के पीछ किसी भूत-प्रेत, पिशाच या डायन का हाथ बताकर उनसे शुल्क की मोटी रकम या एवज में रंगा मुर्गा या काले रंग का मुर्गा, सफेद बकरा या भेड़ा बलि के रूप में चढ़ाने की बात बनाकर जटिल दुरूह व रहस्यमय अनुष्ठान में संलग्न होते हैं। ये कार्य वे अकेले अथवा शिष्यों की सहायता से करते हैं जिसके तहत भूत को प्रलोभन देने, आकर्षित करने, बांधने व कैद करने की प्रक्रिया करते हैं। ये गृहस्वामी से सूप, अरवा चावल, तेल, सिंदूर, दीपक, सखुआ के पत्ते, कजरौटे, चाबुक जैसी सामग्रियों की मांग कर समस्त सिद्ध पीठ यथा कामाख्या (असम, रजरप्पा, हजारीबाग, घाघरा, गुमला) के वंश देवरा, कोराबे नागफेनी, टाँगीनाथ आदि तमाम देवी-देवताओं का सुमिरन करते हैं। ये ओझा सूप में रखे अरवा चावल पर अंगुलियाँ फेरते मंत्र का पाठ या गीत गाते हैं और निश्चित अंतराल पर रोगी के शरीर से प्रेत और डायन के प्रभाव को उतारते हैं। इस क्रम में ओझा के किसी एक या अनेक चेलों के साथ मंत्रोच्चारण की ध्वनि का निकलना जारी रहता है, किन्तु गीतों के आरोह-अवरोह में तीव्रता के साथ वो झूमने लगता है, इस क्रम में कुछ धीमा और अस्पष्ट शब्द वाक्यांश और वाक्यों का उच्चारण करता है, जिसमें प्रेत का नाम, उसका वासस्थान, उसकी प्रकृति एवं स्वभाव के वर्णन के साथ-साथ उस भूत को संचालित करने वाले/वाली के शारीरिक बनावट, नैन-नक्स, आकृति, प्रकृति उसके घर की दिशा व दशा का उल्लेख करता है। उसके समक्ष जो रोगी के परिजन तथा अन्य प्रेत-भीरू भीड़ जिसमें स्त्री-पुरुष, बच्चे-बूढ़े, नौजवान होते हैं सभी सांस रोकर कर भय मिश्रित क्रोध और घृणा से भरकर उस महिला की जीवन-लीला को ही समाप्त कर देते हैं।

देखने में यह आता है कि बीमारी के अलावा कई अन्य प्रयोजनों में भी जैसे किसी की कोई वस्तु चोरी हो जाने, कोई वस्तु न मिलने, परिवार में अशांति रहने या परिवार में बारम्बार दुःख, बीमारी आदि से पीड़ित होने पर भी इसके निदान के लिए गाँव वाले ओझा, गुनी, मति, भगत आदि की शरण में जाते हैं। ऐसी परिस्थिति में ओझा और भगत स्वयं उनके घर आकर तंत्र-मंत्र से झाड़-फूंक करता है और विश्वास दिलाता है कि अब सब ठीक हो जाएगा। परन्तु इसके पश्चात् भी यदि पीड़ित को संतुष्टि नहीं मिलती तब वे पुनः उस ओझा के पास जाते हैं। अब ओझा उन्हें एक पत्ते में अरवा चावल तथा कुछ पैसे डालकर प्रातः अपने घर लेकर आने को कहता है, जिसे एक चबूतरे पर रखना होता है। उस चबूतरे के पास ऊँचे- ऊँचे मिट्टी के टीले पर अनेक झंडे होते हैं। ओझा/भगत स्नान कर अपने चबूतरे के पास आता है। अपने ऊपर तीन बार बेंत लगाकर सिर को हिलाते हुए खुद मंत्रोच्चारण करता है और एक-एक पत्ता उठाते हुए सभी को उसकी तकलीफों तथा उसका निवारण कैसे किया जाय इसकी जानकारी देता है। इस क्रिया को गाँव वाले 'सोखादूरा' या 'डलिया' कहते हैं। अगर कोई व्यक्ति ओझा, भगत की बातों से पूर्णतः संतुष्ट नहीं होता है तब वह ओझा से कहता है - हमारा डलिया ठीक से देखो मैं जिस काम के लिए आया हूँ उसका जवाब हमें सही-सही नहीं मिल रहा है। इस पर भगत क्रोधित होकर अपने ऊपर बेंत का प्रयोग करने लगता है। इसके पश्चात् उसकी तकलीफ के पीछे किसका हाथ है इसका खुलासा करता है और डायन आदि का प्रकोप बताकर उसके निवारण के लिए संतप्त व्यक्ति से अच्छी रकम ले लेता है।

कहीं-कहीं जब कोई रोगी या बुखारग्रस्त व्यक्ति अपने इलाज के लिए ओझा के पास जाता है तब ओझा सूर्योदय के पूर्व या सूर्यास्त के पश्चात् बुखारग्रस्त व्यक्ति की बगल में बैठकर काली मुर्गी का बच्चा (चूजा) और पूजन-सामग्री रखकर पूजा करता है। पूजा करने के क्रम में वह सिंहबोंगा-देशाउली जहेरबोंगा और अन्य ग्राम देवी-देवताओं से आग्रह करता है कि वे डायन देवता (दाड़िबोंगा) को मनावें ताकि वह बुखारग्रस्त व्यक्ति को पीड़ा देना (खून चूसना) बन्द कर दें। ओझा डायन-देवता से आग्रह करता है कि वह इस व्यक्ति को छोड़कर अन्यत्र चला जाए, यहाँ उसकी मांगों को (पूजन सामग्री) पूरा किया जा रहा है। भुने हुए सरसों के बीज को लेकर मंत्र पाठ कर ओझा फूंक कर छिड़कता है और इस प्रकार रास्ता काटना है ताकि दाड़िबोंगा वापस न लौटे। उसके बाद ओझा और उसके एक-दो साथी गाँव या बस्ती के बाहर पूजन-सामग्री के साथ जाते

हैं। निर्जन स्थान पर पहुँचने के बाद उस-पूजन सामग्री को रास्ते के किनारे रखकर उस स्थान को ईंट, कठकोयले के चूर्ण आदि से वृत्ताकार घेरा बना देता है। घेरे के अंदर सिंदूर से टीका करता है तथा घेरे के बाहर गोलची फूल, दीप जलाता है। अब काली मुर्गी के बच्चे (चूजे) को दोनों हाथों से पकड़कर पूजा आरम्भ करता है। वह उपरोक्त सभी देवी-देवताओं से आराधना करता है कि दाड़िबोंगा को समझायें कि वह बुखारग्रस्त व्यक्ति को पीड़ा देना (खून चूसना) बन्द कर दें, उसकी मांगों को पूरा किया जा रहा है। दस-पंद्रह मिनट तक पूजा करने के बाद मुर्गी को काटता है और खून पूजा-स्थल पर गिराता है। अंत में कटी मुर्गी को लेकर अन्यत्र चला जाता है। बाद में रोगी के परिवार वालों को विश्वास दिलाता है कि पूजा के पश्चात् डायन का प्रभाव खत्म हो गया है अब रोगी पूरी तरह ठीक हो जाएगा।

षष्ठ अध्याय

डायन कुप्रथा के मुख्य कारक तत्व

आदिकाल से ही मानव की आस्था पारलौकिक शक्तियों में चली आ रही है। जैसे-जैसे समाज अपने विकास के विभिन्न चरणों पर अग्रसर होता गया इनमें विश्वास की परम्परा में भी कुछ परिवर्तन आता गया। इन शक्तियों के साथ कुछ बुरी शक्तियों तथा विकृतियों का भी समावेश समाज में होता गया। धीरे-धीरे ये शक्तियाँ अपनी पकड़ मजबूत करती गयीं और यही विश्वास अंधविश्वास का रूप लेता गया।

आज के संदर्भ में ये अंधविश्वास और कुछ नहीं, बस पुराने समय के बिना परखे हुए ज्ञान को ही अंधविश्वास कहा जाता है। यही आज लोगों की धार्मिक दृष्टि और सांस्कृतिक-चेतना बन गयी है। जनजातीय समाज में ये अंधविश्वास अपनी पकड़ मजबूत बना चुका है। अंधविश्वास एक मानवीय विषमता है जो न किसी विशेष व्यक्ति को, बल्कि संपूर्ण समाज को उस भंवर में डाल देता है जहाँ से विकास रूपी रोशनी की परिकल्पना भी परिहास-सी प्रतीत होती है। भूत-प्रेत, ओझा, मति, डायन आदि की परिकल्पना इसी अंधविश्वास से जुड़ी हुई है। इसी अंधविश्वास के कारण अगर परिवार या समाज का कोई सदस्य अचानक बीमार पड़ जाता है तो उसकी बीमारी का कारण लोग डायन या अप्राकृतिक शक्ति का प्रकोप समझते हैं और उनको ये विश्वास है कि इस प्रकार की बीमारी का इलाज सिर्फ ओझा या मति ही कर सकते हैं। डॉक्टर द्वारा यह संभव नहीं है। इस प्रकार अंधविश्वास के कारण डायन, ओझा, मति आदि का प्रभाव धूमिल होने के बजाय और भी गहरा होता जा रहा है। अंधविश्वास के प्रमुख कारणों में निम्नलिखित बिन्दुओं पर विचार किया जा सकता है।

1. अशिक्षा एवं अज्ञानता -

मानव का विवेक जगता है शिक्षा से। शिक्षा से ही व्यक्ति, परिवार और समाज की जड़ता दूर होती है, अंधकार मिटता है, रूढ़िवादिता समाप्त होती है। शिक्षा से ही मानवीय हितों की रक्षा और राष्ट्रीयता का विकास संभव है। शिक्षा से ही चरित्र बनता है, जीवन स्वावलंबी होता है, अधिकार और कर्त्तव्य का बोध होता है। भारत में आजादी के बाद ही देश के प्रथम प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने शिक्षा के विकास पर काफी जोर दिया। उनका कहना था

कि जनजातियों में शिक्षा के विकास से ही देश का विकास संभव हो सकता है। इसलिए उन्होंने शिक्षा के विकास के लिए विभिन्न योजनाएँ बनवायीं। चौदह वर्ष तक के बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से आवश्यक प्रयास करने का निर्देश केन्द्र एवं राज्यों की सरकार को दिया गया। इसके लिए अनेक आवासीय विद्यालय, शिक्षा-आश्रमों की स्थापना की गई परन्तु वह जनजातियों के सांस्कृतिक, सामाजिक और व्यावहारिकता का विकास करने के लिए पूर्ण नहीं थी। वह शिक्षा-पद्धति उनके सर्वांगीण विकास के लिए अधूरी है, क्योंकि उनके समाज में जो अंधविश्वास, कुरीतियाँ, परम्पराएँ व्याप्त हैं उनके निवारण की व्याख्या यह शिक्षा-पद्धति नहीं करती है। अतः उनका ज्ञान अधूरा ही रह जाता है। यदि समाज या परिवार में गंदे पानी के सेवन से डायरिया तथा गर्मी के दिनों में अधिक आम खा लेने से दस्त हो जाता है या कोई अन्य बीमारी हो जाती है तो वे इसे डायन की करामात समझ बैठते हैं, क्योंकि वे इन बीमारियों का सही कारण नहीं जान पाते। उनकी अशिक्षा तथा अज्ञानता का फायदा उठाकर ओझा, गुनी विभिन्न प्रकार के रसायनों के प्रयोग से विभिन चमत्कार दिखाते हैं और अपने शक्ति-प्रदर्शन के एवज में जनजातियों से काफी पैसा बना लेते हैं। यदि कोई बीमारी थोड़ी-बहुत जड़ी-बूटी के प्रयोग से ओझा द्वारा ठीक कर दी जाती है तो उस बीमारी के पीछे किसी डायन का हाथ बताकर भी वे लोगों की अज्ञानता को फायदा उठाते हैं। इस प्रकार शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न प्रयासों के बावजूद वह स्तर नहीं पाया जा सका है जिसकी जनजातीय क्षेत्रों में नितांत आवश्यकता है और कुप्रथाएँ प्रसारित एवं पल्लवित हो रही हैं। अज्ञानता के कारण ही ओझा आदि की बात को लोग नकार नहीं पाते हैं और ऐसे स्त्री या व्यक्ति जिसे ओझा डायन करार देता है उसके प्रति उनका रुख प्रतिशोधात्मक हो जाता है। जहाँ तक अशिक्षा से उत्पन्न अंधविश्वास का सवाल है, वह इन डायन-हत्याओं के लिए काफी हद तक जिम्मेवार है। ग्रामीण क्षेत्रों में फैली अज्ञानता का आलम यह है कि कई बार गाय अगर अचानक दूध देना बंद कर देती है एवं उनके स्तन सूज जाते हैं या दूध के स्थान पर लाल रंग का द्रव निकलने लगता है या कोई पेड़ सूख जाता है या फिर किसी औरत को मरा हुआ बच्चा पैदा होने पर जोर-शोर से डायन की तलाश शुरू हो जाती है जिसमें स्वार्थी सक्रिय भूमिका निभाते हैं। लेकिन इन घटनाओं की पृष्ठभूमि में यह नहीं सोचा जाता है कि अगर गाय 'लाल चित्ती' का पत्ता खा ले तो उसकी ऐसी हालत हो जाती है या अगर कोई पेड़ की जड़ में खार जातीय रासायनिक

पदार्थ डाल दें तो पेड़ को सूखते देर नहीं लगती या फिर औरत को मरा हुआ बच्चा पैदा होने के कारण हैं, जैसे- पौष्टिक आहारों की कमी से या 'रीकेट' नामक बीमारी का शिकार हो जाना आदि। इसके अलावा बच्चे का बड़ा शरीर भी उसकी मृत्यु का कारण हो सकता है, फिर इसमें डायन कहाँ से टपक पड़ी?

शिक्षा के महाजाल और अशिक्षा के बोझ के बीच बिहार का यह जनजातीय क्षेत्र शिक्षा के मामले में अत्यंत पिछड़ा हुआ है। वर्तमान में बिहार साक्षरता के मामले में देशभर में 31वें स्थान पर है। वर्ष 1991 के आंकड़े के आधार पर बिहार में निरक्षरों की संख्या 61.46 प्रतिशत है। यहाँ पुरुषों में 52.63 प्रतिशत तथा महिलाओं में 23.10 प्रतिशत साक्षरता है। जनसंख्या के साथ-साथ निरक्षरों की संख्या में बढ़ोत्तरी के बीच सरकार को सन् 2000 तक सबको शिक्षित भी कर देना है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् राज्य में विद्यालयों की संख्या में तो वृद्धि हुई, लेकिन उस अनुपात में साक्षरता दर नहीं बढ़ी। इसे इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि बच्चों का नामांकन तो होता रहा, लेकिन बच्चे स्कूल जाना भी छोड़ते रहे। इसका मुख्य कारण आर्थिक है और लड़कियों को सामाजिक कारणों से पढ़ाई बीच में ही छोड़नी पड़ती है। एक सरकारी आंकड़े के अनुसार पांचवीं कक्षा तक जाते-जाते सौ में से 65 बच्चे स्कूल जाना छोड़ देते हैं। इसी प्रकार 8वीं कक्षा तक जाते-जाते 87.32 प्रतिशत बच्चे स्कूल जाना छोड़ देते हैं। स्पष्ट है कि यहीं पर सरकारी कोशिश हल्की पड़ जाती हैं। प्रशासन के पास ऐसी कोई व्यवस्था या साधन नहीं है कि स्कूल परित्याग करने वाले बच्चों को ऐसा करने से रोका जाय। विद्यालय छोड़ने वालों में सदियों से समाज के कमजोर वर्ग के ही बच्चे हैं, जिनमें सबसे अधिक अनुसूचित जनजातीय वर्ग के बच्चे (लगभग 66.12 प्रतिशत) प्राथमिक शिक्षा के बाद विद्यालय का परित्याग कर देते हैं। राज्य सरकार ने विद्यालय परित्याग करने के कारक तत्वों की खोजबीन कराने के बाद 'ड्रोप आउट' रोकने के लिए 30 हजार अनौपचारिक शिक्षा-केन्द्र और 20 हजार विशेष शिक्षा-केन्द्र खोले हैं। ऐसे केन्द्रों में बच्चों को सिर्फ साक्षर बनाने का लक्ष्य है। सरकार की बातों पर ही विश्वास करें तो चूंकि सभी को सर्वसुलभ बुनियादी एवं प्राथमिक शिक्षा नहीं दी जाती इसलिए कुछ लोगों को साक्षर ही बना दिया जाय।

प्राथमिक विद्यालय तक जाते-जाते विद्यालय का परित्याग कर देने वाले बच्चों को पढ़ाई के प्रति प्रोत्साहित करने के लिए सरकार द्वारा योजना शुरु की गई थी जिसके अन्तर्गत बच्चों को स्कूल जाने पर प्रतिदिन एक रुपया देना

था। चरवाहा विद्यालय जैसी ही इस योजना की भी वही दशा हुई। अनुसूचित जनजातियों में साक्षरता का प्रतिशत सबसे कम है। 1961 से 1991 तक के उपलब्ध आंकड़े के अनुसार (तालिका संख्या 1) क्रमशः साक्षरता में वृद्धि अवश्य हुई है। 1961 में साक्षरता दर 13 प्रतिशत थी। 1971 में लगभग 24 प्रतिशत हो गई। ग्रामीण स्त्री-साक्षरता ही इनकी जीवन-गुणवत्ता के लिए आवश्यक है। 1991 में ग्रामीण पुरुषों में भी साक्षरता मात्र 30 प्रतिशत थी।

झारखण्ड में साक्षरता - छोटानागपुर संथाल परगना में 194 प्रखण्ड हैं जिनमें 112 प्रखण्ड जनजातीय उपयोजना क्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं। प्रखण्डवार साक्षरता के आंकड़े (तालिका संख्या 2) में द्रष्टव्य हैं। साक्षरता-स्तर को चार भागों में बाँटा गया 0-10, 10-20, 21-30, और 31 अधिकतम है। झारखण्ड के मात्र 9 प्रतिशत प्रमण्डल की साक्षरता-दर 31 प्रतिशत या उससे अधिक है। संथान परगना प्रमंडल सबसे पिछड़ा है। 42 प्रखण्डों में से मात्र एक प्रखण्ड में साक्षरता 31 प्रतिशत से अधिक है। झारखण्ड के 14 प्रखण्डों की साक्षरता-दर 0 से लेकर 10 प्रतिशत है। संथाल परगना प्रमंडल में ऐसे प्रखंड 7 प्रतिशत हैं और उत्तरी व दक्षिणी छोटानागपुर में 33 प्रतिशत और 0.7 प्रतिशत हैं। 43 प्रतिशत प्रखण्डों की साक्षरता-दर 11 से लेकर 20 तथा 37 प्रतिशत प्रखण्डों की 21 से 30 है। जनजातीय क्षेत्रों में 4 जिले ऐसे हैं जहाँ साक्षरता-दर 50 प्रतिशत से अधिक है। इनमें पूर्वी सिंहभूम में 59.05 प्रतिशत, धनबाद में 55.47 प्रतिशत, बोकारो में 52.93 प्रतिशत, राँची में 51.52 प्रतिशत लोग साक्षर हैं। इसके अलावा पाकुड़ ऐसा जिला है जहाँ सबसे कम 24.67 प्रतिशत लोग साक्षर हैं। सबसे कम साक्षरता 11.84 प्रतिशत गढ़वा जिले में है।

महिला साक्षरता - देश के स्वतंत्र होने के पश्चात् अब तक हमलोग 51 वर्षों की यात्रा तय कर चुके हैं। इस अवधि में जनजातियों के बीच शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए समय-समय पर सरकार एवं गैर सरकारी प्रयत्न किए गए हैं। 1961 में जहाँ पर अनुसूचित जनजाति की ग्रामीण महिलाओं में साक्षरता 2.62 प्रतिशत थी, 1971 में 4.06 प्रतिशत, 1981 में 6.81 प्रतिशत, 1991 में 12.74 प्रतिशत तक पहुँच गई है। इन आंकड़ों से ये तो पता चलता है कि उत्तरोत्तर साक्षरता बढ़ ही रही है। इससे उत्साहवर्द्धन तो होता है, लेकिन जब हम 21वीं सदी में प्रवेश को कदम बढ़ा रहे हैं तब महिला-साक्षरता का यह प्रतिशत हम लोगों को चुनौती देते हुए नजर आता है कि क्या इसी प्रतिशत के साथ महिलाओं को लेकर हम 21वीं सदी में जायेंगे?

जिन 10 जिलों में महिलाओं की साक्षरता 20 प्रतिशत से भी कम है। उनमें गोड्डा में 17.91 प्रतिशत, साहेबगंज में 16.32 प्रतिशत, पाकुड़ में 14.87 प्रतिशत, दुमका में 17.91 प्रतिशत, देवघर 19.74 प्रतिशत, गिरिडीह 17.65 प्रतिशत चतरा में 14. 39 प्रतिशत, कोडरमा में 18.61 प्रतिशत, पलामू में 16.16 प्रतिशत महिलाएँ साक्षर हैं।

तालिका संख्या - 1 अनुसूचित जनजातियों की साक्षरता

वर्ष		ग्रामीण	शहरी	कुल
1961	पुरुष	12.55	30.13	13.04
	स्त्री	02.62	13.31	02.89
	कुल	**07.60**	**22.17**	**07.99**
1971	पुरुष	16.35	36.69	17.09
	स्त्री	04.06	19.35	04.58
	कुल	**10.25**	**28.48**	**10.89**
1981	पुरुष	22.94	47.60	24.52
	स्त्री	06.81	27.32	16.35
	कुल	**14.92**	**37.93**	**16.35**
1991	पुरुष	30.66	50.80	32.50
	स्त्री	12.74	37.16	14.50
	कुल	**21.81**	**46.35**	**23.63**

यह सर्वविदित है कि कोई भी देश अपने नागरिकों की शिक्षा की अनदेखी करके आगे नहीं बढ़ सकता, क्योंकि जब तक स्वस्थ शरीर के साथ स्वस्थ दिमाग पर बल नहीं दिया जायेगा तब तक कोई भी समाज चाहे वह गैर-जनजातीय हो या जनजातीय सतत् विकास के पथ पर अग्रसर नहीं हो पायेगा। वास्तव में शिक्षा आजीवन चलने वाली एक आदर्श प्रक्रिया है। कोई भी व्यक्ति अपने पर्यावरण के घटकों के साथ हुई अंतःक्रिया के क्रम में जो कुछ अनुभव करता है, सीखता है इसके परिणामस्वरूप उसके व्यवहार में जो परिवर्तन दिखता है, शिक्षा का मूल अर्थ वही है। केन्द्र सरकार ने सन् 1967 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति निर्धारित कर संपूर्ण देश में समान शिक्षा पद्धति लागू की। 1978 में 15 से 35 वर्ष के अनपढ़ व्यक्तियों, विशेषकर महिलाओं, को शिक्षित बनाने के लिए प्रौढ़

शिक्षा-कार्यक्रम चलाया था। इसका उद्देश्य लोगों में व्याप्त अज्ञानता, पूर्वाग्रह रूढ़िवाद, अंधविश्वास आदि को" दूर करना था।

तालिका संख्या - 2 झारखण्ड में साक्षरता

क्रम सं.	जिला का नाम	प्रखण्ड की संख्या	साक्षरता का स्तर			
			0-10	11-20	21-30	30+
1.	गोड्डा	8	-	06	02	-
2.	साहेबगंज / पाकुड़	10	02	10	-	01
3.	दुमका	14	-	12	02	-
4.	देवघर	07	01	06	-	-
	संथाल परगना	42	03	34	04	01
	प्रतिशत	**100**	**7.14**	**80.96**	**9.52**	**2.38**
5.	धनबाद / बोकारो	10	01	07	01	01
6.	गिरिडीह	18	09	09	-	-
7.	हजारीबाग / कोडरमा / चतरा / उत्तरी छोटानागपुर	24	07	11	04	02
8.	लोहरदगा	05	-	01	04	-
9.	गुमला	18	-	04	05	09
10.	राँची	20	-	05	12	03
11.	पू. सिंहभूम	0	-	03	06	-
12.	प. सिंहभूम	23	-	14	09	-
	द. छोटानागपुर	100	07	43	37	13
	प्रतिशत	**100**	**07**	**43**	**37**	**13**
	झारखण्ड	194	27	104	46	17
	प्रतिशत	**100**	**13.92**	**53.61**	**23.71**	**8.76**

सन् 1986 में राष्ट्रव्यापी बहस, परिसंवादों, गोष्ठियों के द्वारा गहन विचारोपरांत संसद द्वारा नयी शिक्षा-नीति लागू की गई। इस नीति की सर्वाधिक उपलब्धि

मुक्त विद्यालय एवं मुक्त विश्वविद्यालय द्वारा शिक्षा के नवीन अवसर प्रदान करना रहा, लेकिन इसका भी बिहार के इन जनजातीय ग्रामीण क्षेत्रों को अपेक्षित लाभ नहीं मिला। हालांकि वर्तमान में चल रहे साक्षरता-अभियान का सुखद परिणाम तो सामने आ ही रहा है कि समाज में निचले स्तर तक साक्षरता के संबंध में जागरूकता पैदा हो रही है। पहले से साक्षरता के प्रतिशत में वृद्धि तो हुई है, लेकिन दुर्भाग्यजनक यह है कि समाज में फैली विभिन्न विकृतियों, रूढ़िवाद, पूर्वाग्रह, अंधविश्वास के कारण निरीह महिलाओं पर डायन का आरोप लगाकर उन्हें जान से मार दिया जाता है। इस स्तर पर अभी बहुत कम जागरूकता है।

अध्ययन के दौरान यह बात सामने आयी है कि पुरुषों के मुकाबले महिलाओं में अंधविश्वास तथा रूढ़िवादिता के प्रति अधिक झुकाव है। डायन-समस्या से अधिक ग्रसित महिलाएँ ही हैं। तालिका-1 के आंकड़ों से स्पष्ट है कि साक्षरता का प्रतिशत जनजातीय ग्रामीण पुरुष-महिलाओं के बीच कम है ही, लेकिन महिलाओं में तो और भी कम है। स्वाभाविक है कि निरक्षरता का बोझा ढ़ोते हुए महिलाओं के बीच कम में ही अंधविश्वास एवं जागरूकता की कमी के कारण डायन की समस्या है। आवश्यकता इस बात की है कि महिलाओं के बीच साक्षरता का प्रचार-प्रसार एक सामाजिक आंदोलन के रूप में किया जाय ताकि महिलाओं में डायन के प्रति नकारात्मक दृष्टि विकसित हो और ये वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाते हुए इस कुप्रथा का प्रतिकार कर सकें। और इस साक्षरता अभियान में एवं प्राथमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में अंधविश्वास संबंधी भ्रांतियों के कारण डायन के प्रति विश्वास को अविश्वास में बदलने के लिए शिक्षाप्रद अध्याय शामिल किए जाए।

डायन का मपट चरित्र और कृत्य बहुत मामलों में अज्ञानता से जुड़ा है। शिक्षा ही बौद्धिक विकास का वह माध्यम है जो अज्ञानता के अंधकार को दूर कर सकता है। जनजातियों के बीच जो डायन में विश्वास है वह उनकी अशिक्षा और अज्ञानता के कारण ही है। इसके लिए मुख्य रूप से हमारी शिक्षा-प्रणाली जिम्मेवार है, क्योंकि शिक्षा की जो रूपरेखा सरकार ने तैयार की है, वह उन्हें इस बात की जानकारी नहीं देती है कि कोई रोग उनमें क्यों हो रहा है। इससे उन्हें मुक्ति दिलाने का मुख्य उपाय यही है कि उनमें सही शिक्षा का प्रसार किया जाय जो उनके दैनिक जीवन में उपयोग हो सके और उनकी अज्ञानता को मिटाकर अंधविश्वास दूर कर सके।

2. पारम्परिक चिकित्सा एवं झाड़-फूंक में विश्वास -

आज जहाँ विश्व एक ओर 21वीं सदी में प्रवेश कर रहा है, वहीं दूसरी ओर समाज का बहुत बड़ा हिस्सा जो शिक्षितों की श्रेणी में आता है, झाड़-फूंक में विश्वास करता है, तो अनपढ़ और अशिक्षित वर्ग की तो बात ही अलग है। उनके बीच अगर कोई भी रोग या बीमारी फैलती है तो वे उसका कारण अदृश्य शक्तियों या डायन आदि को मानते हैं और इसके निवारण के लिए वे पारम्परिक चिकित्सा एवं झाड़-फूंक के पीछे भागते हैं। जंगल और सुदूर देहाती क्षेत्रों में रहने वाले जनजातीय आधुनिक दवाओं पर विश्वास न करके ओझा-गुणी द्वारा दी जाने वाली जड़ी-बूटी पर अधिक विश्वास करते हैं और उनके द्वारा किये जाने वाले झाड़-फूंक को रोग निवारण में सहायक मानते हैं। इससे ओझा, डायनों का काम फल-फूल रहा है। वैज्ञानिक दृष्टि के अभाव में जनजातीय समाज अपनी बीमारी का कारण गन्दगी को न समझ कर डायन द्वारा किया गया कृत्य मानते हैं। प्रसिद्ध मनोविज्ञानी प्रो. सच्चिदानन्द ने भी अपने एक आलेख में लिखा है कि प्रेत एवं डायन द्वारा प्रकोपित व्यक्ति की चिकित्सा दवा से नहीं की जा सकती है। किन्तु ओझा उसे ठीक कर देता है।

जनजातीय समाज में डायन के कारण होने वाली बीमारी को ओझा, भगत ही ठीक कर सकता है। प्रत्येक बीमारी के इलाज के लिए वह ओझा के पास जाता है और वे लोग भी स्वयं को चिकित्सक से कम नहीं समझते हैं। उनके पास सभी तरह की बीमारी को ठीक करने का नुस्खा, तंत्र-मंत्र, झाड़-फूंक इत्यादि ही है। वे स्वयं द्वारा किसी भी बीमारी को लाइलाज नहीं बताते। लेकिन जब वे किसी स्थानीय बीमारियों, समस्या का हल निकालने में नाकाम हो जाते हैं तो वे इसका दोष पाखंडपूर्ण ढंग से किसी असहाय विधवा, कमजोर, वृद्ध महिला पर डायन होने का आरोप यह लगाते हुए करते हैं कि यह बीमारी इसलिए नहीं ठीक हो रही है कि गाँव या टोले की अमुक स्त्री या पुरुष तो डायन या बिसाहा है, वही इस रोग को जाने नहीं दे रहा है। जब तक उस महिला को मारेंगे-पीटेंगे नहीं, गाँव से भगायेंगे नहीं या पीट-पीट कर उसे मार नहीं डालेंगे तब तक रोगी रोगमुक्त नहीं होगा। ऐसे में रोगी या उस परिवार का सदस्य, बल्कि पूरे समाज के सदस्य बिना कुछ सोचे-समझे उस महिला पर टूट पड़ते हैं। अध्ययन के दौरान एकत्र किये गये आंकड़े से पता चलता है कि लगभग पंचानबे (95) प्रतिशत केस में डायन नाम से आरोपित महिला की हत्या कर दी

जाती है। यह सब गाँव के ओझा, मति, गुणी, दबंग व्यक्ति अपना प्रभाव जमाए रखने के लिए करते हैं ताकि उनकी पूछ कम न हो जाय।

जहाँ तक जनजातियों के पारम्परिक चिकित्सा में विश्वास की बात है उसको समग्र रूप से दोषी करार देना उचित नहीं होगा। दोष तो वहाँ पर है जहाँ पर ओझा या गुणी जो जड़ी-बूटी या तंत्र-मंत्र द्वारा चिकित्सा करते हैं। लेकिन इस पद्धति की अपनी एक सीमा है। छोटी -मोटी बीमारी होने पर इन ओझाओं द्वारा जड़ी-बूटी से चिकित्सा करने पर रोगी ठीक भी हो जाता है, लेकिन आधुनिक समय से पर्यावरण प्रदूषण के कारण बहुत से रोगाणु वातावरण में विचरण करते रहते हैं। इनके कारण जो गंभीर बीमारी होती है उसकी चिकित्सा आधुनिक चिकित्सा-प्रणाली द्वारा कारगर तरीके से संभव है। इसलिए पारम्परिक चिकित्सा प्रणाली एक सीमा तक तो ठीक है, बल्कि आवश्यकता है जड़ी-बूटी के सही जानकार व्यक्तियों को बढ़ावा दिया जाय। साथ ही जड़ी-बूटी का गलत उपयोग करने वाले कम जानकरी रखने वाले व्यक्तियों को हतोत्साहित किया जाय ताकि ये लोग जनता का अपने अधूरे ज्ञान द्वारा आर्थिक-शोषण न कर सकें।

3. आधुनिक चिकित्सा सुविधा का अभाव -

जनजातीय क्षेत्रों में आधुनिक चिकित्सा सुविधाओं का अभाव रहा है। सरकार द्वारा स्वास्थ्य जाँच और चिकित्सा उपलब्ध कराने हेतु अनेक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र एवं उपकेन्द्र खोले गये हैं। परन्तु इन केन्द्रों में चिकित्सक की अनुपस्थिति या अनियमित उपस्थिति तथा दवाओं के अभाव के कारण लोगों को समुचित लाभ नहीं मिल पाता है। सरकार द्वारा जो प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र/ उपकेन्द्र गाँववासियों के स्वास्थ्य की देखभाल के लिए खोले गये हैं उनमें डाक्टरों, नर्सों और दवाइयों की कमी रहती है। एक डाक्टर जो शहर के ही किसी चिकित्सा महाविद्यालय में चिकित्सा-शास्त्र की पढ़ाई छः से सात वर्षों तक करने के बाद जब उसको प्रखंड स्तरीय या किसी उपकेन्द्र में चिकित्सक की हैसियत से नियुक्त किया जाता है तो उसे वहाँ पर चौबीसों घंटे रहने में कठिनाई का अनुभव होता है। वह जिन सुविधाओं के बीच अध्ययन कर फिर गाँव में रहने को बाध्य होता है उसे सरकार की तरफ से प्राप्त आवासीय सुविधा तथा वे सुविधाएँ नहीं मिल पाती हैं जिसकी वह कामना करता है। साथ ही परिवार के साथ भी नहीं रह पाता है। बच्चों की शिक्षा-दीक्षा में व्यवधान आ जाता है, इसलिए वह बाध्य होकर चिकित्सक के मानवीय पक्ष को भूलकर आर्थिक एवं

सुविधाभोगी माहौल को प्राथमिकता देता है। वह इन सुदूर ग्रामीण स्वास्थ्य-केन्द्रों में नियुक्ति के बावजूद वहाँ रहना पसंद नहीं करता। नियुक्ति तो उसकी वहाँ होती है, पर रहता है वह शहर में है। हालांकि यह चिकित्सा-शास्त्र के नीतियों से न्यायसंगत नहीं बैठता है।

स्वाभाविक है स्वास्थ्य केन्द्र के प्रभारी डाक्टर के नहीं रहने पर दवा, स्वास्थ्य कर्मचारी, चिकित्सकीय उपकरणों के उपलब्धता एवं रखरखाव पर भी प्रश्न-चिह्न लग जाता है। अगर गाँव का कोई रोगी अपने निकटस्थ स्वास्थ्य केन्द्र में डाक्टर से अपनी बीमारी के संबंध में परामर्श लेने जाता है तो कभी डाक्टर की अनुपलब्धता तो कभी दवा की कमी जैसी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। ऐसी परिस्थिति में जनजातीय क्षेत्र में इन चिकित्सा-केन्द्रों की विश्वसनीयता एवं लोकप्रियता नहीं बन पायी है। कभी-कभी गाँव से रोगी को प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्र तक ले जाने में काफी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। इन परिस्थितियों में रोगी के परिजन, ओझा और भगत को ही, जो गाँवों में उपलब्ध है, अपना अच्छा और कम खर्च वाला डाक्टर समझ कर उसके पास चले जाते हैं।

4. आवागमन एवं संचार-माध्यमों की कमी -

आजादी के बाद से ही देश में आवागमन के साधन रेल, सड़क आदि का विकास काफी तेजी से हो रहा है। देश में चारों ओर रेल तथा सड़कों का जाल-सा छा गया है, फिर भी देश के दुर्गम और सुदूर क्षेत्र आज भी आवागमन के साधनों के अभाव से जूझ रहे हैं। जनजातीय क्षेत्रों में आज भी गाँव-घर काफी दूर-दूर होते हैं और हर गाँव को रेल या सड़क-सेवा संचार के साधनों से जोड़ा नहीं जा सकता है। जिस कारण जनजातीय क्षेत्र के बहुत बड़े भाग के लोग आज भी आदिम-जीवन जीने के लिए मजबूर हैं और आधुनिक सभ्यता की किरण उन तक नहीं पहुँच सकी है। गाँव के रोगी को इलाज के लिए शहर ले जाने में कई तरह की परेशानियों से जूझना पड़ता है। इसलिए उन्हें विवश होकर ओझा, भगतों की शरण में ही जाना पड़ता है और उनकी बातों पर विश्वास कर उनके अनुसार चलना पड़ता है।

5. वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अभाव -

इस 20वीं सदी के अंतिम चरण में भी लोगों की सोच आदिमकालीन वैचारिक चिंतन से प्रभावित है, रोगों के सही कारण, उनकी पहचान तथा उसके उचित

चिकित्सा संबंधी ज्ञान से वंचित है। जनजातीय गाँवों में मलेरिया, कुपोषण के कारण विभिन्न रोग, टी.बी., खून की कमी आदि बीमारियों की भरमार है। प्रत्येक वर्ष झारखण्ड के गाँवों में मलेरिया, डायरिया, दस्त आदि बीमारी के कारण मरने वालों की संख्या का ग्राफ ऊपर ही चढ़ता जा रहा है। इन रोगों के कारक तत्वों की जानकारी अगर ग्रामवासियों को हो जाय तो काफी हद तक इन बीमारियों पर नियंत्रण पाया जा सकता है। बस आवश्यकता है कि ये बीमारियाँ होती क्यों हैं तथा कैसे गाँवों में ही उपस्थित संसाधनों जड़ी-बूटी तथा आधुनिक चिकित्सा के द्वारा भी कम से कम खर्च में ठीक हो सकती हैं। इसकी जानकारी बहुत ही सरल एवं स्थानीय भाषा में ग्रामवासियों को समझाने की कोशिश की जाय ताकि उन लोगों में इन बीमारियों के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित हो सके। वे लोग इस बात को समझ सकें कि उपरोक्त रोग डायन, बिसाही जैसे कुरीतियों, बुरी आत्माओं के कारण नहीं है, बल्कि इसके लिए जिम्मेवार तो रोगाणु, जीवाणु एवं स्वस्थ जीवनशैली न होना ही है।

6. विकास योजनाओं की कमी -

सरकार द्वारा जनजातीय क्षेत्र में विकास योजनाओं के लिए अरबों रुपये खर्च किये जा चुके हैं। परन्तु उनका वास्तविक लाभ सुदूरवर्ती क्षेत्रों में बसने वाले लोगों को नहीं मिल पाया है इसका अधिकांश लाभ कुछ चालाक लोग और बिचौलिये उठाते रहे हैं। बिहार के इस जनजातीय क्षेत्र पर अंग्रेज बहुत ही कशमोकश के बाद अपना प्रशासनिक नियंत्रण स्थापित कर पाये थे। विदित है कि जनजातीय समाज की अपनी विशिष्ट जीवन-शैली, सांस्कृतिक चेतना तथा आर्थिक-धार्मिक संगठन था। अंग्रेजों द्वारा नियंत्रण के बाद इन पर सांस्कृतिक आक्रमण शुरू हुआ जिससे इनके शांत जीवन में उथल-पुथल होने लगी। इस धरती के वीर सपूतों ने समय-समय पर इसका विरोध भी किया था। एक लंबी लड़ाई के बाद देश स्वतंत्र हुआ। प्रथम प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने जनजातियों की समस्याओं की तरफ ध्यान देते हुए कहा था कि जनजातियों को अपनी सभ्यता-संस्कृति और प्रतिभा के अनुसार ही अपना विकास करने का मौका देना चाहिए। पंचवर्षीय योजनाओं के विभिन्न सोपान से होते हुए 9वीं पंचवर्षीय योजना तक की विकास-यात्रा में ग्रामीण एवं जनजातीय विकास के लिए विभिन्न योजनाओं को सरकार द्वारा लागू किया गया। स्वतंत्रता के 50 वर्षों के बाद भी जब-जब जनजातीय विकास की तरफ दृष्टिपात करते हैं तो जैसी अपेक्षा थी वैसा स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार एवं आवास-संबंधी विकास नजर नहीं

आता है। इसका मुख्य कारण यह है कि जनजातीय विकास के लिए जो भी योजनाएँ बनायी गयीं, उन कार्यक्रमों को जनजातीय समाज स्वीकार नहीं कर पाया। साथ ही सरकार के जिस अभिकरण को इस योजनाओं को लागू करना था वह भी पूरी ईमानदारी से पेश नहीं आया। परिणामस्वरूप इन योजनाओं का जितना लाभ मिलना चाहिए था, उसका लाभ सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों के निवासियों के बीच तक नहीं पहुँच पाया। जनजातीय क्षेत्र में अभी भी बहुत से गाँव ऐसे हैं जिनसे प्रखंड कार्यालय की दूरी बहुत अधिक है। बरसात के दिनों में तो लगभग चार माह तक लोगों का सड़क-मार्ग से संपर्क टूट जाता है। ऐसे में उन गाँवों तक प्रशासनिक अधिकारी भी बहुत कम या लगभग नहीं के बराबर जाते हैं। इस कारण से सुदूर क्षेत्र के निवासी विभिन्न विकास की याजनाओं से परिचित ही नहीं हो पाते, लाभ उठाना तो दूर की बात है।

7. सही नेतृत्व एवं जागरूकता का अभाव -

जनजातीय क्षेत्र में लोगों को जागरूक कर सही दिश-निर्देश देने हेतु सशक्त नेतृत्व की कमी रही है। उनके बीच डायन-बिसाहा प्रथा को समाप्त करने हेतु कोई जनजागरण अभियान नहीं चलाया गया है। उनको जागरूक बनाने हेतु स्वयंसेवी संगठनों का अभाव है। सदियों से जनजातियों का अपने समाज को नियंत्रित एवं व्यवस्थित रूप से चलाने के लिए उनका अपना राजनैतिक संगठन रहा है। इस संगठन के अन्तर्गत कोई लिखित नियम-कानून तो नहीं, लेकिन पारम्परिक कानून तो जरूर था। इनकी अपनी परम्परगत पंचायत-व्यवस्था, इनके कार्यों की देख-रेख के लिए परम्परागत अधिकारी होते थे। इन्हीं अधिकारियों पर समाज को नियंत्रित रखने तथा सही मार्गदर्शन देने का दायित्व था। परम्परागत कानून इतना कड़ा था कि गाँव का कोई भी व्यक्ति उन नियमों का उल्लंघन करते हुए पाया जाता था तो उस पर पंचायत बुलाकर दोनों पक्ष पर कड़ी कार्यवाही की जाती थी। यह बात सहीं है कि उस समय भी पंचायत के संचालन में महिलाओं की भागीदारी नगण्य हुआ करती थी, पुरुषों का बोल-बाला था, लेकिन महिलाओं के प्रति न्याय की उचित व्यवस्था थी।

अंग्रेजों द्वारा इस जनजातीय क्षेत्र पर नियंत्रण स्थापित हो जाने के बाद जनजातियों की इस पारम्परिक सामाजिक-नियंत्रण-व्यवस्था में हल्का-सा बिखराव आना प्रारम्भ हो गया। जब देश स्वतंत्र हुआ और उसके कुछ वर्षों के बाद जब पंचायती राजव्यवस्था लागू हुई तो परिणाम धीरे-धीरे यह सामने आया

कि परम्परागत व्यवस्था-प्रणाली का स्वरूप और उसके अधिकारी की शक्ति कम होने लगी। साथ ही इस तरह पहले जो लोग सामाजिक नेतृत्व करते थे उनकी बातों का प्रभाव समाज पर कम होने लगा और इधर नयी सरकारी पंचायत-व्यवस्था अपेक्षाकृत जनजातीय समाज को नेतृत्व एवं ठोस दिशा नहीं दे पायी। जिससे जनजातीय युवाओं में आधुनिक किताबी शिक्षा का किताबी प्रभाव पड़ा, लेकिन समाज को दिशा देने, समाज को सही ढंग से समझने, सही नेतृत्व देने एवं विज्ञान एवं परम्परागत नेतृत्व को मिलकर आपस में समन्वय रखते हुए समाज के लोगों को रूढ़िवादी अंधविश्वास तथा महिलाओं के प्रति संकुचित विचारों से ऊपर उठकर, विचार कर समाज को नयी दिशा देनी होगी। पारम्परिक पंचायत-व्यवस्था में महिला प्रतिनिधियों की भी भागीदारी सुनिश्चित करने से महिलाओं को डायन घोषित कर प्रताड़ित करने में कमी आयेगी।

8. आर्थिक कारण -

डायन तथा ओझाओं के प्रति विश्वास और उनके प्रसार के लिए आर्थिक स्थिति भी काफी जिम्मेवार है। आर्थिक विपन्नता भी डायन-प्रथा का मूल कारण है। पैसे की कमी के कारण रोगी को अच्छे डाक्टर तक नहीं पहुँचाया जा सकता है। गाँव या प्रखण्ड के सरकारी स्वास्थ्य-केन्द्रों में डाक्टरों, नर्सों और दवाइयों की कमी रही है। गाँव से रोगी को शहर लाने में कई तरह की कठिनाइयाँ होती हैं जो उनके वश की बात नहीं है। चूंकि उनमें जागरूकता की भी कमी है, इस हालत में वे ओझा और भगत को ही अपना सबसे अच्छा और कम खर्चे वाला डाक्टर समझ कर उनके पास जाते हैं।

जहाँ आर्थिक विपन्नता होती है वहाँ धन के प्रति आकर्षण का होना स्वाभाविक है। किसी विधवा महिला और बच्चों को मारकर उसके जमीन और घर-द्वार ले लिये जाते हैं। कहीं-कहीं ऐसा भी देखने में आता है कि अगर कोई अकेला भाई है और उसके पास जमीन-जायदाद ज्यादा है तब ऐसी स्थिति में उसकी पत्नी पर डायन का आरोप लगाकर पूरे परिवार की हत्या कर दी जाती है। उस जायदाद को मरने वाले रिश्तेदारों द्वारा ले लिया जाता है।

जनजातीय समुदाय में प्रायः जमीन सभी के पास है, चाहे वह कम से कम एक कट्ठा ही क्यों न हो, रहती है। जमीन रहने के बावजूद उन्हें आर्थिक विपन्नता का सामना करना पड़ता है। खेती का छोटे-छोटे टुकड़ों में होना, अतिवृष्टि, अनावृष्टि खेती के अवैज्ञानिक तरीके, सिंचाई की कमी आदि कई

ऐसे कारण हैं जिनसे वे खेती अच्छे तरीके से नहीं कर पाते हैं। यहाँ तक कि पूरे वर्ष भर के खाने का अनाज भी नहीं उपजा पाते हैं। स्वाभाविक है इससे उनकी आर्थिक स्थिति कमजोर होगी। आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण उन्हें जिस आत्मविश्वास के साथ जीवन को जीना चाहिए वैसा नहीं जी पाते हैं। फसल की कटाई के समाप्त होने के बाद लोगों को बाध्य होकर गाँवों से बाहर जाकर मजदूरी करने के लिए पलायन करना पड़ता है। बीमारी आदि की अवस्था में पैसा न होने के कारण, उसी बीमारी का इलाज अच्छे डाक्टर से नहीं करा पाते हैं। मजबूर होकर उन्हें ओझा, भगत की शरण में ही जाना पड़ता है और मजबूरी का फायदा उठाकर उनका मनोवैज्ञानिक एवं आर्थिक शोषण ये ओझा, भगत करते हैं।

9. सम्पत्ति पर अधिकार के लिए -

भूमि और सम्पत्ति विवाद भी डायन-प्रथा को बढ़ावा देता है। जनजातीय रीति-रिवाज कानून के अनुसार आदिवासी औरतों को जमीन पर कोई अधिकार नहीं होता। उसके द्वारा उन्हें सिर्फ जीवन-निर्वाह करने का अधिकार है। कोई विधवा न तो अपने पति की जमीन बेच सकती है, न ही उसे किसी के नाम हस्तांतरित ही कर सकती है। यहाँ तक कि अपनी सगी बेटी को भी नहीं। वह सिर्फ आजीवन उस जमीन का उपभोग कर सकती है। उसकी मृत्यु के बाद यह जमीन उसकी पति के निकट रिश्तेदारों की हो जाती है या फिर गाँव के मुण्डा की। इस कारण प्रायः निकट के रिश्तेदार जल्दी से जल्दी विधवा के मृत्यु की कामना करते हैं और अक्सर इस स्थिति में उसे डायन करार देकर उसकी हत्या कर दी जाती है। हत्या करने के लिए सबसे ठोस निरापद कारण होता है डायन का आरोप लगाना।

जनजातीय समाज के घर की बेटी जब तक अविवाहित है तब तक सम्पत्ति में उसका पूरा अधिकार रहता है, परन्तु विवाह के बाद उसका वह अधिकार स्वतः समाप्त हो जाता है और जहाँ वह बहू बनकर जाती है अपने पति की सम्पत्ति पर उसका पूरा अधिकार हो जाता है। इसके लिए कोई लिखित नियम नहीं है, बल्कि यह पुरातन-काल से समाज में चलती आ रहा रीति-रिवाज और कानून है। लेकिन उस महिला को अपने पति की सम्पत्ति के प्रति जीवन-निर्वाह करने का हक उनके जीवन-पर्यान्त बरकरार रखने के प्रयास अपने भाई-विरादरी अथवा समाज के लोगों द्वारा किया जाना चाहिए। किन्तु बिडम्बना यह है कि समाज के

ही लोग असहाय औरत को डायन के रूप में प्रचारित कर देते हैं तथा भैयाद के लोग के द्वारा व्यक्तिगत अथवा सामूहिक रूप से उसकी हत्या कर दी जाती है। इस प्रकार से भूमि-विवाद ही डायन हत्याओं का एक कारण बन जाता है। इसका निदान विशेष नियम के तहत होनी चाहिए जो निम्मलिखित हैः

(क) आदिवासी समाज में विधवा विवाह का प्रचलन है। यदि विधवा महिला फिर से विवाह करती है उस अवस्था में दूसरे विवाह से उस सम्पत्ति में से उसे अपना अधिकार छोड़ना होगा। यदि उसके बच्चे हैं तो वह उस सम्पति को उनके बच्चों के नाम हस्तांतरित होगी।

(ख) सम्पत्ति में हिस्सेदारी के लिए बेटी के साथ वही बातें लागू होंगी जो परम्परानुसार चल रहा है। यदि किसी कारणवश बेटी अविवाहित घर में ही रह जाती है, शादी की उम्र ढल जाती है उस अवस्था में उससे पूछकर कि वह अब विवाह नहीं करेगी ऐसी स्थिति में उसके नाम से सम्पत्ति अलग से होना चाहिए जिससे वह आजीवन जीविका चला सके। बाद में उस सम्पत्ति का हस्तान्तरण भैयादी लोगों में हो जाना चाहिए। इसके जीवित रहने तक उसका संरक्षक भैयादी लोगों द्वारा मिलना चाहिए। यह उनकी जिम्मेवारी एवं दायित्व होना चाहिए। वैसा नहीं करने पर उसपर उचित कार्रवाई होनी चाहिए।

(ग) शादी के बाद लड़का या लड़की द्वारा त्याग करने पर (दोनों ही) जिसमें त्याग के लिए किया है उसे दण्ड देना पड़ता है। इस हालत में लड़की की ससुराल की सम्पत्ति में से अधिकार समाप्त किया जायेगा। दोबारा विवाह न करने पर उसके लिए उपरिलिखित (ख) का नियम लागू होगा।

10. आर्थिक निर्बलता -

क्षेत्रीय कार्य के दौरान एकत्रित सूचना के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण या जनजातीय क्षेत्रों में कमजोर व प्रतिरोध नहीं कर पाने वाली महिलाओं को ही डायन करार दिया जाता है। विधवा स्त्री जिसका पति न हो या फिर जिसके पति ने किन्हीं कारणों से अपनी पत्नी का त्याग कर दिया हो उसके ऊपर ही डायन रूपी कहर टूटता है। पढ़ी-लिखी या सम्पन्न घर-परिवार की बहू या बेटी को गाँव के लोग गुनिया, बैगा द्वारा डायन करार नहीं दिया जाता है। गाँव वालों को इस अंधविश्वास की तरफ प्रेरित करने महिला ही गुनिया, बैगा या फिर अन्य गाँववालों का विरोध करने में असमर्थ रहती है और गाँव-समाज में प्रताड़ित होती है।

11. ओझा एवं डायन के विकल्प का अभाव -

जनजातीय क्षेत्रों में ओझा-मति और डायन-बिसाइन का कोई सशक्त विकल्प नहीं विकसित हो पाया है, जो इस खतरनाक परम्परा का सही रूप में प्रतिकार कर सके। कहीं-कहीं ईसाई मिशनरियों या अन्य धार्मिक संस्थाओं तथा गैर-सरकारी संगठनों द्वारा इस दिशा में प्रयास किए गये हैं, पर वे नगण्य हैं।

सप्तम अध्याय

निष्कर्ष एवं सुझाव

जनजातीय क्षेत्र में यह समस्या सामाजिक, मनोवैज्ञानिक एवं आर्थिक बिन्दुओं पर आधारित है। ऐसा मनोवैज्ञानिक विश्वास है जो समाज की कुछ निरीह महिलाओं की गरिमा, जीवन, भावनात्मक सदमे से संबंधित है। इस कुप्रथा को केवल विधि-व्यवस्था या अपराध की समस्या मानकर नहीं सुलझाया जा सकता है। किसी जनजातीय महिला से जमीन हड़पने या दुश्मनी के कारण उन्हें डायन करार कर प्रताड़ित करना अमानवीय है। उन महिलाओं को जबरदस्ती मनोवैज्ञानिक रूप से प्रताड़ित करना मानवाधिकार का भी उल्लंघन है। अध्ययन से पता चलता है डायन होने का कोई आधार नहीं है बल्कि, अंधविश्वास के कारण लोग ऐसा मानते हैं और अंधविश्वास को केवल शिक्षा तथा जागरूकता से दूर नहीं किया जा सकता है। आज का अंधविश्वास पुराने समय का बिना परखा हुआ ज्ञान है यानी वैज्ञानिक कसौटी पर बिना परखे हुए पुराने ज्ञान को ही अंधविश्वास का नाम दिया जाता है। डायन हत्या संबंधी घटनाएँ स्वार्थ से प्रेरित होती हैं। ये घटनाएँ केवल जनजातीय क्षेत्र में ही नहीं होतीं, बल्कि गैर-जनजातीय क्षेत्र में भी, जहाँ अशिक्षा है, वहाँ भी इस कुप्रथा की जड़ें गहरी है।

जिन गाँवों में स्वास्थ्य की न्यूनतम सुविधाएँ नहीं मिलती हैं वहाँ इस प्रथा को बढ़ावा मिलता है। इस प्रथा के बने रहने से ओझा/मति को आर्थिक रूप से फायदा है।

इस प्रकार डायन-प्रथा के लिए मुख्य रूप से मानवीय मनोवृत्तियाँ तथा अनुभूतियाँ जिम्मेवार हैं तथा इनके बनने का आधार अनुभव होता है। जनजातीय क्षेत्र में जहाँ अज्ञानता, निरक्षरता एवं जागरूकता की कमी है, वहाँ विशेष रूप से सामाजिक, मनोवैज्ञानिक कारण इस कुप्रथा द्वारा महिलाओं को प्रताड़ित करने वालों, न ही प्रताड़ित होने वाली महिलाओं तथा उनके परिवार के सदस्यों के बीच है और न ही गाँव के सामाजिक नेतृत्व में डायन-प्रथा के प्रमुख कारकों में से एक आर्थिक पक्ष भी है, विशेषकर भूमि तथा अचल सम्पत्ति से संबंधित है। ऐसी घटनाओं के प्रारंभ में कोई सम्पत्ति का स्वार्थ नहीं होता है, लेकिन बाद में यह स्वार्थ भी जुड़ जाता है तथा परिणामस्परूप डायन करार देकर सम्पत्ति हथियाने के लालच में महिला को मार दिया जाता है।

डायन-प्रथा समस्या की धुरी सामाजिक, मनोवैज्ञानिक बिन्दु के ही इर्द-गिर्द घूमती है। डायन-प्रथा के कारण जो समस्या है वह विधि-व्यवस्था की नहीं, बल्कि उसको जनजातीय समाज की सांस्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक समग्रता को ध्यान में रखकर समाधान ढूंढ़ना होगा।

डायन-प्रथा को ठीक मानने, न मानने के पीछे कोई ठोस कारण तो नहीं समझ में आता, लेकिन ये तो बहुत जोर देकर कहा जा सकता है कि डायन-प्रथा के कारण जो हत्याएँ हो रही हैं उनकी जितनी निन्दा की जाय वह कम है, यह मानवाधिकार पर भी कुठाराघात है। ये हत्याएँ निश्चित रूप से अंधविश्वास के कारण होती हैं। जनजातीय समाज में वह बचपन से ही घर कर जाता है, क्योंकि बच्चा समाज में झाड़-फूंक, ताबीज, ओझा, मति ही देखने आता है। बचपन से ही कोमल मस्तिष्क पर इन्हीं रूढ़िवादी एवं अंधविश्वास का मन पर प्रभाव पड़ता है और वह टोने-टोटकों को ही अपने जीवन की नियामक शक्ति मान बैठता है। इस तरह के कुसंस्कार से उसका दिमाग, सोचने की शक्ति व्यापक नहीं बन पाती है। जीवन में संघर्ष करने की नैतिक शक्ति का ह्रास होने लगता है तथा यथार्थ को पहचान नहीं हो पाता है।

डायन-प्रथा जनजातीय क्षेत्रों के लिए एक गंभीर समस्या है। इसका समाधान शिक्षा तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण का प्रचार-प्रसार कर निकाला जा सकता है। स्वस्थ मन, स्वस्थ शरीर और पर्याप्त आय इस कुप्रथा की समाप्ति में अग्रणी भूमिका निभा सकता है। किसी भी समाज में नकारात्मक कार्य करने वाला संगठन या संस्था नहीं बनना चाहिए। गुनिया, ओझा, मति आदि संगठन समाज के कल्याण के लिए बनाये गये हैं, न ही शोषण करने के लिए। जनजातीय ग्रामीण-क्षेत्रों में ओझा-मति को वित्तीय लाभ होता है। इस संस्था को तुरंत तो समाप्त नहीं किया जा सकता है, लेकिन गाँव में ओझा-मति के ही या समानान्तर वैसे व्यक्ति को तैयार किया जाना चाहिए। जो वैज्ञानिक तरीकों से तथ्यों को सिद्ध करते हुए बीमारी का कारण एवं उचित दवा बतलाये या उपलब्ध करवाये। इस तरह आने वाली पीढ़ी वैज्ञानिक तरीकों को समझ सकेगी जिससे ये कुप्रथा, अंधविश्वास दूर हो सकेगी।

सुझाव :

डायन जैसी कुप्रथा को नियंत्रित करने एवं धीरे-धीरे समाप्त करने के लिए निम्नलिखित उपाय किए जा सकते हैं:

(1) प्रशासकीय नियंत्रण

(2) दीर्घकालिक उपाय

1. प्रशासकीय नियंत्रण -

पुलिस प्रशासन द्वारा जनजातीय क्षेत्र के थानों में उसके अंतर्गत थानों में आने वाले गाँवों में ओझा-मति/डायनों की सूची रखी जाय। माह दो माह के अंतराल पर ये लोग थानों में अपनी गतिविधियों का प्रतिवेदन दर्ज कराया करें। साथ ही उनकी गतिविधियों पर पुलिस प्रशासन भी ध्यान रखे। संभव हो तो इस कार्य को सुचारू रूप से चलाने के लिए गैर-सरकारी संस्था की भी सहायता ली जा सकती है। ओझा ही डायन को चिह्नित करता है इसलिए ओझा पर कड़ी नजर रखी जाय। अगर किसी निरीह महिला की हत्या डायन का आरोप लगाने के बाद की जाती है तो ओझा से पुलिस द्वारा पूछताछ कर कानूनी कार्रवाही की जानी चाहिए।

2. दीर्घकालीन उपाय -

इसके अन्तर्गत अनुकूल, सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक वातावरण तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण का सृजन तथा प्रचार-प्रसार, जागरूकता लाकर इस डायन-प्रथा के कुपरिणामों से मुक्ति पायी जा सकती है। जब तक लोगों का मन एवं शरीर स्वस्थ नहीं होगा तथा पर्याप्त आय नहीं होगी तब तक डायन-प्रथा का समाधान काफी कठिन है।

(क) शिक्षा को बढ़ावा - गाँवों में प्राथमिक शिक्षा में तेजी लायी जाय तथा शिक्षा का प्रचार-प्रसार मातृभाषा में हो। पाठ्यक्रम में डायन-प्रथा के विरोध में जागरण के लिए अध्याय जोड़ा जाना चाहिए। ताकि विद्यालय जाने वाले विद्यार्थियों के मन में बचपन से इस कुप्रथा के विरुद्ध घृणा हो सके तथा विरोध में वैज्ञानिक दृष्टिकोण दिमाग में बैठ सके। जनजातीय समाज में शिक्षा की कमी के कारण विकास की प्रक्रिया बहुत धीमी है। ये कई प्रकार के प्रथा अंधविश्वास, रूढ़िवादी, परम्परा से ग्रसित हैं जिसके कारण हिंसा, ईर्ष्या, द्वेष और भेद-भाव इनमें जड़ करता जा रहा है। विभिन्न सरकारी योजनाओं का उपयोग ग्रामीण जनजातीय समुदाय अज्ञानता तथा जागरूकता की कमी के कारण नहीं कर पाता है और इसका फायदा भ्रष्ट अधिकारी और बिचौलिये उठाते हैं।

जनजातीय क्षेत्र में विद्यालयों, आश्रम विद्यालयों, प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्र, पशु-चिकित्सालयों तथा कृषि-केन्द्रों के माध्यम से जनजातीय जीवन की

दैनिक, लेकिन जीवन्त-समस्याओं के समाधान, सुविधाओं की तरफ ध्यान देकर सकारात्मक एवं ठोस पहल की जा सकती है।

(ख) जागरूकता/जागृति - समाज में हर व्यक्ति को अपने अधिकार के प्रति जागरूक होना पड़ेगा। इसका मतलब यह है कि समाज में हो रही गतिविधियों की जानकारी रखनी होगी, परन्तु यह काम समाज का हर व्यक्ति नहीं कर सकता। उन सब में जागरूकता लाने के लिए समाज के पढ़े-लिखे युवक-युवतियों तथा स्वयंसेवी संगठनों को आगे आना होगा। इस जागरूक वर्ग के लोगों को समाज के दबे वर्ग के लोगों को देश में हो रही गतिविधियों से अवगत कराना होगा। सरकार उनके विकास के लिए क्या कर रही है, इसका पूरा फायदा उन्हें कैसे मिल सकता है आदि की पूर्ण जानकारी उन्हें उनकी सरल भाषा में देनी होगी जिसे वे समझकर उसका लाभ उठा सकें। समाज के पिछड़े वर्ग, जनजातियों आदि के मन में बैठे अंधविश्वास को दूर करके उनमें ये भावना भरनी होगी कि उनके बीच जो बीमारियाँ आदि होती हैं वे डायन आदि के प्रकोप से नहीं हैं और न ही ओझा द्वारा झाड़-फूंक से उनका निवारण हो सकता है। इसके लिए उन्हें अस्पताल में जाना होगा जहाँ उनके हर रोग का इलाज हो सकता है। ग्रामीणों को यह बताना होगा कि टोने-टोटके, अंधविश्वास उनके जीवन की नियामक शक्ति नहीं हो सकते। इससे उनकी संघर्ष-क्षमता में कमी आती है, उनके चहुँमुखी विकास एवं प्रगति के बाधक होती है। जनजातियों को इन बातों से अवगत कराने के लिए तथा उन्हें अपने विश्वास में लेने के लिए स्वयंसेवी संगठनों और पढ़े-लिखे वर्ग के लोगों को इनके साथ काफी धैर्य, सहानुभूति तथा आंतरिकता से पेश आना होगा। इन युवक-युवतियों को जनजातियों के वातावरण में कुछ समय के लिए ढलना होगा ताकि वे उनकी बातों को समझकर उस पर अमल कर सकें। समाज के जो सदस्य इन घटनाओं के निष्क्रिय द्रष्टा तथा तटस्थ मनःस्थिति में रहते हैं उन लोगों को भी जागृत होना होगा ताकि वे भी विरोध का वातावरण बना सकें। ग्रामस्तर पर शिक्षित युवाओं का एक संगठन होना चाहिए जो इन सब अंधविश्वासी घटनाओं पर नजर रखे। उनके सभ्यता, संस्कृति और स्वभाव को ठेस पहुँचाए बिना जागरूकता लाने का प्रयास करना होगा। पाहन, मुण्डा, मानकी आदि जो स्थानीय जनजातीय परम्परागत नेता हैं उनको प्रशिक्षण देकर उनमें अच्छे नेतृत्व की भावना का विकास करना होगा ताकि वे जनजातियों के सामाजिक, धार्मिक अवधारणाओं और वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में समझा सकें।

(ग) विज्ञान का प्रचार-प्रसार - गाँव के लागों के बीच विज्ञान का प्रचार-प्रसार काफी कम हुआ है। उन्हें रासायनिक पदार्थों तथा उनकी प्रतिक्रियाओं की कोई जानकारी नहीं है जिसका फायदा उठाकर ओझा-गुणी उनका आर्थिक एवं मानसिक शोषण करते हैं। ओझा-गुणी इन रासायनिक पदार्थों का प्रयोग कर उसे अपनी दैवीय-शक्ति एवं तंत्र-मंत्र का चमत्कार बताकर भोले-भाले जनजातियों का हर प्रकार से दोहन करते हैं। इसलिए इन ओझा-मति आदि से बचने के लिए उन्हें रासायनिक पदार्थों और उनसे होने वाली प्रतिक्रियाओं के बारे में अवगत कराना होगा ताकि उनमें होने वाले रोगों के कारण तथा उनके संक्रमण को कैसे रोका जाय इसकी जानकारी देनी होगी जिससे वे उसका सही इलाज करवा सकें। उनमें यदि विज्ञान का सही प्रचार-प्रसार होगा तब वे ओझाओं के चंगुल में नहीं फंस पायेंगे। ओझा के कार्यों को आसानी से समझ पायेंगे और यथासंभव उसका विरोध भी कर सकते हैं। विज्ञान का यथासंभव प्रचार-प्रसार होने से उनके अंदर का अंधविश्वास दूर होगा, ओझा-मति के ऊपर से विश्वास हटेगा और डॉक्टर के प्रति विश्वास बढ़ेगा।

(घ) समुचित चिकित्सा-व्यवस्था - ग्रामीण-क्षेत्रों और जनजातीय-क्षेत्रों में चिकित्सा-व्यवस्था समुचित नहीं है। सरकार की तरफ से ग्रामीण-क्षेत्रों में प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र खोले गये हैं, पर इसका उचित लाभ वहाँ के लोगों को नहीं मिल पाता है। आज भी बहुत से क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ दूर-दूर तक अस्पताल आदि का नामोनिशान नहीं है। ग्रामवासियों को अपनी पारम्परिक चिकित्सा-पद्धति पर ही निर्भर रहना पड़ता है। अगर ग्रामीण-क्षेत्रों में चिकित्सालय खुलेंगे तो उनमें डॉक्टरों, नर्सों और दवा की उचित व्यवस्था होगी तब जनजातीय उसका सही फायदा उठा सकेंगे। साथ ही साथ लोगों के अंदर इस बात का भी विकास करना होगा कि अगर उन्हें कोई बीमारी होती है तो उसके निवारण के लिए उन्हें अस्पताल में जाना चाहिए। वहाँ उनका उचित इलाज हो सकेगा। साथ ही वहाँ उनके इलाज के लिए दवाएँ उपलब्ध है जो उन्हें दिया जायगा और इससे वे लाभ उठा सकते हैं। ग्रामीणों को अस्पताल तक लाने और उनके अस्पताल जाने की भावना को बढ़ाने के लिए डॉक्टरों और उनके सहयोगियों के साथ अच्छा व्यवहार करना होगा। उनमें ये विश्वास पैदा करना होगा कि अस्पताल में आने से उनके हर प्रकार के रोग का इलाज हो सकता है जो ओझा-मति आदि नहीं कर सकते हैं। सरकार द्वारा ग्रामीण-क्षेत्रों में जो अस्पताल खोले गये हैं उसकी देख-रेख की व्यवस्था भी करनी होगी वहाँ उचित मात्रा में

दवाओं का प्रबंध, उचित उपकरण की व्यवस्था भी आवश्यक है ताकि डॉक्टर वहाँ आने वाले मरीजों को सही चिकित्सा-सुविधा प्रदान कर सकें। बहुत से क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ चिकित्सा-सुविधा का अभाव होता है। अगर डॉक्टर उपलब्ध है तो दवा नहीं, दवा उपलब्ध है तो उसके रखरखाव की सही व्यवस्था नहीं रहती है। अगर किसी समय डॉक्टर अनुपस्थित रहे तो उसकी अनुपस्थिति में कुछ ऐसे पढ़े-लिखे युवक, युवतियों की व्यवस्था हों जो साधारण बीमारियों का इलाज करने का प्रशिक्षण लिए हों और ग्रामीणों का सही इलाज कर सकें। चूंकि जनजातीय ग्रामीण-क्षेत्रों में घर काफी दूर-दूर होते हैं और हर जगह अस्पताल खोलना संभव भी नहीं है तब ऐसी स्थिति में उन प्रशिक्षित युवकों को उचित मात्रा में दवा की व्यवस्था की जाय जो गाँवों में जाकर ग्रामीणों का इलाज कर सकें। गाँव में जो वैद्य आदि होते हैं उन्हें भी कुछ आधुनिक चिकित्सा-सुविधा के प्रशिक्षण की व्यवस्था करनी चाहिए जिससे वे तत्काल ग्रामीणों का इलाज कर सकें। जब ग्रामीणों को समय पर उचित इलाज कराने की सुविधा मिल जायगी तब ऐसी स्थिति में वे ओझा, भगत आदि की शरण में नहीं जा पायेंगे और उनके चंगुल में फंसने से बच जायेंगे।

(ड.) आर्थिक स्थिति में सुधार - आदिवासी समुदाय में जमीन प्रायः सभी के पास होती है और उनकी जीविका का मुख्य साधन खेती ही होता है। जमीन रहने के बावजूद उन्हें आर्थिक विपन्नता का सामना करना पड़ता है। कभी उन्हें अतिवृष्टि का सामना करना पड़ता है तो कभी अनावृष्टि का। अज्ञानता और खेती के अवैज्ञानिक तरीके के कारण उन्हें फसल अच्छी नहीं मिल पाती है और सालभर काफी मुश्किल से अपने परिवार का पालन कर पाते हैं। आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण कृषि-कार्य से समय मिलने पर उन्हें दूसरी जगह मजदूरी करने जाना पड़ता है। अगर सरकार के द्वारा उन्हें उचित कृषि-सुविधा प्रदान की जाय तो निश्चित रूप से उनकी आर्थिक-स्थिति में सुधार होगा। अशिक्षित होने के कारण सरकार द्वारा प्रदत्त कृषि-संबंधी रियायतों का भी वे लोग फायदा नहीं उठा पाते हैं और उनके नाम पर दूसरे भ्रष्ट अधिकारी उनका फायदा उठा लेते हैं। सरकार भूमिहीन किसानों के लिए भी बहुत-सी रोजगार योजनाएँ चलाती है जिसका सही लाभ उठाकर ग्रामीण अपनी आर्थिक-स्थिति में सुधार कर सकते हैं। लेकिन इन योजनाओं का लाभ वे ग्रामीण नहीं उठा पाते हैं। अतः योजना बनाना ही मुख्य काम नहीं है, योजना का सही कार्यान्वयन होना जरूरी है। इसके लिए सरकार को प्रयत्न करना होगा। जब ग्रामीण जनजातियों

की आर्थिक-स्थिति में सुधार होगा तब स्वतः ही वे समाज की अन्य धाराओं से जुड़ना शुरू कर देंगे और उनमें जो अंधविश्वास, ओझा, डायन, भगत के प्रति डर की भावना है उससे दूर हट पायेंगे। साथ ही अपने आस-पास और समाज को अपने साथ आगे बढ़ाने में मदद कर पायेंगे। आर्थिक-स्थिति जब उनकी सुधरेगी तब उनका झुकाव अन्य क्षेत्रों जैसे- शिक्षा तथा अन्य सुख-सुविधाओं को अर्जित करने के प्रति बढ़ेगा। शिक्षा के प्रसार से उनके अंदर जो अंधविश्वास है उसका कारण वो अच्छी तरह से समझ पायेंगे तथा अंधविश्वास फैलाने वाले तत्वों का तर्कपूर्ण प्रतिकार कर पायेंगे। इससे समाज में ओझा, डायन, भगत आदि का जो दबदबा बना हुआ है उसमें कमी आयेगी और धीरे-धीरे समाज डायन-प्रथा जैसे घृणित कुसंस्कारों, कुरीतियों से मुक्ति पा सकेगा।

(च) पारम्परिक पंचायत-व्यवस्था की जिम्मेवारी - सभ्यता के विकास के समय से ही जनजातीय समाज में नेतृत्व की भावना का विकास हुआ है। उनमें भी अपने आस-पास के समाज को संगठित नेतृत्व देने के उद्देश्य से पंचायत जैसी शासन-व्यवस्था का विकास हुआ था। पंचायत-व्यवस्था उतनी ही पुरानी है जितना उनका संगठित जीवन व्यतीत करना। जनजातियों की जो पंचायत-व्यवस्था है उसका कानून बहुत कड़ा है। वे अपने सभी आपसी मामलों, झगड़े-झंझट आदि का निपटारा स्वयं ही अपनी पंचायत के माध्यम से करते आ रहे हैं। गाँव का कोई भी व्यक्ति पंचायत के नियमों का उल्लंघन करने की कोशिश नहीं करता है। अगर कोई उल्लंघन करे तो इसके लिए उसके विरुद्ध कड़ी कार्रवाई की जाती है। परन्तु डायन-प्रथा के विरुद्ध उस पंचायत-व्यवस्था के तहत उचित कानून की व्यवस्था नहीं है। जिसके तहत उन इलाकों में होने वाली डायन-हत्या तथा उनसे संबंधित मामलों का सही निपटारा किया जा सके। डायन-प्रथा को हटाने तथा डायन-हत्या करने वालों के विरुद्ध कड़ी कार्रवाई करने के लिए पंचायत-व्यवस्था में उचित सुधार लाना होगा ताकि किसी कमजोर महिला या उसके परिवार के सदस्यों को इस तरह की विपत्तियों का सामना न करना पड़े। इसके लिए पंचायत के सदस्यों, समाज के बुद्धिजीवी वर्ग के लोगों को समाज में फैली रूढ़िवादिता, अंधविश्वास तथा संकीर्ण-विचारों से ऊपर उठकर स्थिति के बारे में विचार-विमर्श करना चाहिए। पारम्परिक पंचायत-व्यवस्था में अब तक महिलाओं की भागीदारी नगण्य रही है। परन्तु अब महिलाओं में ये भावना उत्पन्न हो रही है कि पंचायत में उनकी भागीदारी होनी चाहिए और वे अपना कदम इस ओर बढ़ा रही हैं। पंचायत व्यवस्था में महिलाओं की उपस्थिति रहने से वे महिलाओं की मनोभावनाओं को समझ सकेंगी और

उन्हें उचित न्याय दिलवा सकेंगी। जनजातीय समाज में महिलाएँ डायन के प्रति विश्वास से ज्यादा ग्रसित हैं। अतः पंचायत की महिलाएँ उनके इस डर और अंधविश्वास की भावना को दूर करने में ज्यादा सहयोग दे सकेंगी और डायन-प्रथा के निपटारे में काफी हद तक सफलता भी मिल पायेगी।

(छ) महिलाओं का सम्पत्ति में हिस्सा (विशेष नियम के तहत) - जनजातीय समाज में महिलाओं का सम्पत्ति में कोई लिखित अधिकार नहीं होता है। बेटी का अपने विवाह के पूर्व पिता की सम्पत्ति पर अधिकार रहता है। विवाह के पश्चात् वह वहाँ बहू बन कर जाती है और पिता की सम्पत्ति से स्वतः अधिकार समाप्त हो जाता है। वह अपने पति के सम्पत्ति की हकदार उसके बच्चे या रिश्तेदार हो जाते हैं। चूंकि उनका सम्पत्ति पर लिखित अधिकार नहीं होता है इस कारण वे अपनी आवश्यकतानुसार उसको बेच नहीं सकते हैं। अगर किसी विधवा महिला के पास काफी सम्पत्ति होती है तब उस सम्पत्ति के लालच में आकर उसके अन्य रिश्तेदार गाँव वालों के साथ मिलकर उसे डायन करार देते हैं और उसकी हत्या कर स्वतः उस सम्पत्ति का वारिस बन जाते हैं। अगर उनकी सम्पत्ति पर लिखित अधिकार होता तो उस महिला के साथ उसके परिवारजनों की सहानुभूति होती और उसे डायन करारा न जाता, क्योंकि उसके परिवार वालों को यह भय रहता है कि यदि वे उस महिला (विधवा) के साथ प्यार से पेश न आयेंगे तब वह अपनी सम्पत्ति अपने चाहने वालों को हस्तांतरित कर देगी। इससे भी डायन-प्रथा और डायन-हत्या से होने वाले मामलों में निश्चित रूप से कमी आ सकती है।

(ज) मीडिया द्वारा प्रचार-प्रसार - आदि काल में समाज में संचार के साधनों का विकास नहीं हो पाया था। अगर किसी को कुछ खबर पंहुचानी होती थी तो काफी समय लग जाता था। परन्तु पिछले कुछ दशकों में संचार के क्षेत्र में एक क्रांति-सी आ गई है। संचार के क्षेत्र में क्रांति आने से विचारों का आदान-प्रदान काफी आसान हो गया है। शहरी-क्षेत्रों में तो संचार-साधनों का जाल-सा बिछ गया है। अब हजारों मील की दूरी पर रहने वाले लोगों के साथ पलक झपकते ही सम्पर्क किया जा सकता है। देश तथा अपने आस-पास होने वाली घटनाओं को मीडिया के विभिन्न माध्यम रेडियों, दूरदर्शन तथा समाचार-पत्रों के माध्यम से पढ़ा, सुना एवं देखा जा सकता है। मीडिया का प्रसार इतनी तेजी से हुआ है कि अब लोग घर बैठे किसी कार्यक्रम का सीधा प्रसारण भी देख सकते हैं। सेलुलर फोन की मदद से लोग जब चाहे, जहाँ चाहें किसी व्यक्ति से सम्पर्क कर बात कर सकते हैं। शहरी-क्षेत्रों के साथ ग्रामीण-क्षेत्रों में संचार एवं मीडिया

का विकास हुआ है। सरकार इस क्षेत्र में प्रयत्नशील है कि देश के हर हिस्से को एक-दूसरे से जोड़ा जा सके। ग्रामीण-क्षेत्रों में जितनी प्रगति की आशा की जा रही थी, उतनी प्रगति तो नहीं हो सकी है फिर भी संतोषजनक प्रगति सरकार ने की है। ग्रामीण-क्षेत्रों में संचार के साधनों के विकास से उनकी मानसिकता में काफी परिवर्तन आया है। ग्रामीण क्षेत्रों में लोगों में अंधविश्वास की भावना काफी भरी पड़ी है। इसको दूर करने के लिए रोडियो, टेलीविजन और समाचार-पत्रों में समय-समय पर शिक्षा, स्वास्थ्य आदि से संबंधित कार्यक्रम पेश किये जाने चाहिए। जनजातियों में डायन, ओझा आदि के प्रति विश्वास और भय की भावना व्याप्त है, उस भावना को दूर करने के लिए टेलीविजन और रेडियो के माध्यम से ऐसे कार्यक्रम प्रस्तुत किये जाने चाहिए जिसमें ओझाओं के द्वारा किये जाने वाले रासायनिक प्रयोग, जिसे वे चमत्कार कहते हैं, उनका खुलासा हो सके। ग्रामीण जनजातीय ये बात समझ सकें कि ओझा आदि जिन वस्तुओं का प्रयोग करते हैं वे कुछ नहीं मात्र रासायनिक प्रतिक्रियाएं हैं जिसे आम आदमी भी आसानी से कर सकता है। नाटक आदि के माध्यम से संचार-माध्यमों को ऐसे कार्यक्रम भी पेश किये जाने चाहिए जो जनजातीय के उनके परिवेश, उनमें व्याप्त अंधविश्वास से कैसे मुक्ति पाई जाय या ऊपर उठा जाय, इसके बारे में उनकी अपनी बोलचाल की भाषा में हों, जिसे वे आसानी से समझ सकें और अपने जीवन में कार्यान्वित कर सकें। इन कार्यक्रमों के प्रसारण से उनमें जागरूकता की भावना आयेगी। साथ-साथ वे अपना मनोरंजन भी कर पायेंगे। मीडिया के माध्यम से सरकार द्वारा चलायी जा रही विभिन्न योजनाओं को जानकर और इस्तेमाल कर वे भी लाभान्वित हो सकते हैं। वर्तमान युग में टेलीविजन, मनोरंजन एवं शिक्षा के प्रसार का सबसे अच्छा माध्यम है। ग्रामीण-क्षेत्रों में हर किसी के पास रेडियो या टेलीविजन नहीं रहता, ये किसी पंचायत के अंतर्गत रहता है और उसे देखने के लिए लोग एक जगह समूह में एकत्रित होंगे जिससे उनमें सामुदायिक भावना का विकास होगा। एक साथ एकत्रित होकर कार्यक्रम को देखने से किसी बात के प्रति विचार-विमर्श होगा और उनका चहुँमुखी विकास संभव हो सकेगा। ऐसा होने से उनमें व्याप्त अंधविश्वास, कुरीतियों का अंत करने में मदद मिल सकेगी। इससे उनका झुकाव शिक्षा, स्वास्थ्य आदि के प्रति होगा। ये डायन तथा ओझाओं के प्रभाव को कम करने में भी कारगर सिद्ध होगा।

(झ) ओझा-मति, सोख, भगत/भगताइन पर पूर्ण रोक - ओझा-मति, सोख जैसे तंत्र-मंत्र रोग ठीक करने वालों पर पूर्ण प्रतिबंध लगाना चाहिए। जब तक

इन लोगों पर कानूनी प्रतिबंध नहीं लगेगा उनका व्यवसाय चलता रहेगा, क्योंकि उनकी आमदनी का यह अच्छा खासा जरिया है। ओझा-मति पूजा के नाम पर ग्रामीणों से नगद रुपया के अलावा, पशु-पक्षी, काँसे का बर्तन, सोने की टिकली जैसी वस्तुओं की माँग करते हैं और भोले-भाले जनजातीय लोग इनके हर आदेश का पालन करते हुए उनकी इच्छाओं की कहीं से भी, किसी तरह की पूर्ति करते हैं, क्योंकि उनके मन में इस बात का भय रहता है कि यदि वे पूजा की आवयश्क सामग्री ओझा-मति, भगत आदि को नहीं देंगे तो उनकी बीमारी, उनके ऊपर जो डायन, भूत अदि का प्रभाव है। वह समाप्त नहीं होगा। ग्रामीण क्षेत्रों में चिकित्सा एवं चिकित्सा-व्यवस्था की काफी कमी है जिसकी वजह से उन ग्रामीणों को विवश होकर ओझा, वैद्यों आदि को ही कुछ दवाइयों का प्रयोग भी जान सके और अपने इस प्रशिक्षण से गाँव वालों की आवश्यकतानुसार मदद कर सकें। ओझा तथा वैद्य के ऊपर इस बात का नियंत्रण लगाना चाहिए कि वे तंत्र-मंत्र का प्रयोग रोग से छुटकारा दिलाने के लिए न करें और न ही किसी पर डायन, भूत-प्रेत आदि का आरोप लगाएँ। जब ओझा स्वयं ऐसे आरोप लगाना बंद कर देंगे तब समाज में एक अलग ही सुख, शांति और सौहार्द का वातावरण पैदा हो सकेगा। डायन-प्रथा और डायन-हत्या से लोग भी छुटकारा पा सकेंगे और अंततः डायन-प्रथा का जड़ से उन्मूलन किया जा सकेगा।

(ञ) सुदूर इलाकों में आवागमन के साधनों का विकास - आज भी देश का एक काफी बड़ा हिस्सा आवागमन के साधनों का भरपूर लाभ नहीं उठा सकता है। कारण यह है कि वहाँ तक आवागमन के साधन का विकास नही हो पाता है। कई इलाके आज भी ऐसे हैं, जो कि शहर से काफी पास है, किन्तु बरसात के दिनों में संयोग से कट जाते हैं, अगर कोई ग्रामीण नदी पार गया हुआ है और बरसात हो गयी तो वापस गाँव लौटना असंभव हो जाता है। आवागमन के साधनों का सही विकास न हो पाने के कारण अभी भी काफी गाँव ऐसे हैं जहाँ न कोई दुकान है, न कहीं विकास के चिह्न देखने को मिलते हैं और उसी माहौल में गाँववालों की अंधविश्वास पर पकड़ बराबर मजबूत होती रहने के लिए पर्याप्त मिट्टी-पानी मिलता रहता है। उन सुदूर क्षेत्रों तक विकास की योजनाएँ पहुँचाई जा सकती हैं। एक तरफ जहाँ आवागमन के विभिन्न साधनों की बाढ़-सी आ गयी है जिसकी वजह से वातावरण में प्रदूषण की मात्रा बढ़ती जा रही है वहीं दूसरी ओर सुदूर गाँवों में अगर कोई गाड़ी चली गयी तो उसे लोग बड़े आश्चर्य भरी दृष्टि से देखते हैं। इस तरह के आवागमन के

साधनों के असमान विस्तार से पिछड़ा इलाका और भी पिछड़ता ही जा रहा है। इसलिए सभी इलाकों के समुचित विकास के लिए यातायात की सुविधा का होना अत्यावश्यक है। ग्रामीण एवं जनजातीय क्षेत्रों में आवागमन के साधनों के विकास होने से जनजातीय लोग अपने सीमित घेरे से बाहर निकलकर अन्य लोगों से मिल सकेंगे। सरकार की जो भी योजनाएँ उनके विकास के लिए बनती हैं उनको उन जानजातियों के बीच तक पहुँचाया जा सकेगा जिसका वे भी उपयोग कर अपने संकीर्ण मानसिकता से ऊपर उठ सकेंगे। अपनी जरूरत की वस्तुओं को प्राप्त करने के लिए वे सुदूर इलाके से निकल कर शहर तक आ सकेंगे और वहाँ आकर समाज में हो रहे परिवर्तन को देखकर अपने अंदर भी अनुकूल बदलाव ला सकेंगे। यातायात के साधनों के अभाव की वजह से ग्रामीण जनजातियों में कोई रोग हो जाता है तब उसका उचित इलाज आदि नहीं कर पाते हैं और उचित इलाज के अभाव में उनकी मौत हो जाती है। सुविधाओं का अभाव होने के कारण उन्हें अपने गाँव में ही उपलब्ध ओझा, भगत की शरण में जाना पड़ता है। वे ओझा उनसे इस बात का दावा करते हैं कि उनके पास हर रोग का इलाज है और झाड़-फूंक के द्वारा हर बीमारी का इलाज कर सकते हैं। विवश होकर उनकी हर बात माननी पड़ती है इसके अलावा उन असहाय जनजातियों के पास और कोई रास्ता भी नहीं रह जाता है। आवागमन के अभाव में उन ग्रामीणों तक सही राह दिखलाने वाले कार्यकर्त्ता भी नहीं पहुँच पाते हैं। इससे उनके बीच डायन-प्रथा और उनसे संबंधित अंधविश्वासों को फैलाने का उचित माहौल मिल जाता है। अतः सरकार को सुदूर क्षेत्रों के सही विकास के लिए तथा उनमें फैले अंधविश्वास को दूर करने के लिए आवागमन के उचित साधनों का विकास करना होगा जिससे विकास की रोशनी उन तक भी पहुँचाई जा सके और यथोचित लाभ उठाकर छिछला जीवन जीने से ऊपर उठकर अपना सही विकास कर सकें।

(ट) जनजागरण अभियान चलाना - आज के युग में जनजागरण अभियान का लोगों की मानसिकता, उनके दैनिक जीवन में परिवर्तन लाने का सबसे अच्छा और सार्थक उपाय है। जनजातीय क्षेत्रों में जहाँ ओझा, भगत, डायन आदि का काफी बोल-बाला है, उन क्षेत्रों में समाजसेवी संगठनों, देश के जागरूक लोगों, जिन्हें विज्ञान पर भरोसा है, उन्हें सरकार की मदद से जनजागरण अभियान चलाना होगा। ग्रामवासियों को इस अभियान के तहत यह बताने और समझाने का प्रयास करना होगा कि टोना-टोटका, अंधविश्वास उनके जीवन

की नियामक शक्ति नहीं हो सकते हैं। अंधविश्वास के कारण उनके जीवन की स्फूर्ति नष्ट होती जाती है, संघर्ष करने की शक्ति और नैतिकता का ह्रास होता है। इससे उनका विकास अवरुद्ध हो जाता है। जो भी जनजागरण अभियान हों वे सभी उनकी क्षेत्रीय बोलचाल की भाषा में होने चाहिए ताकि उसे समझकर उसे वे अपने जीवन में लागू कर सकें। स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका यह है कि जनजातीय समाज को सहायक रचना प्रदान करें ताकि वे इस बात में सक्षम होकर अपने ही अंदर एक ऐसा आन्दोलन खड़ा करें जो परिवर्तन की भावना से प्रेरित हो और आगे आ सकें। इस अभियान के अंतर्गत यह भी प्रचार होना चाहिए कि जनजातीय पंचायत के तहत जो विद्यालय हैं वहाँ के बच्चों और शिक्षकों के सहायोग से वर्ष में कम से कम दो बार डायन तथा ओझा-विरोधी नारे लगवाएं और रैली का आयोजन किया जाय। गाँव में स्थित आँगनबाड़ी केन्द्रों के बच्चों द्वारा डायन के विरोध में क्रांतिकारी-विचारों सहित सामूहिक गीत, कविता और नाटक का प्रचार-प्रसार किया जाय। आंगनबाड़ी में जो भी महिलाएँ आएं उनका सही मार्गदर्शन कर उन्हें समाज के असामाजिक तत्वों के विरुद्ध खड़ा किया जाय ताकि डायन की आड़ में कोई निर्दोष असहाय तथा कमजोर महिला को न तो प्रताड़ित कर सके और न ही उसकी हत्या हो सके। जनजातियों और गाँववालों के बीच उन परिस्थितियों की सृष्टि की जाय जिनसे अंधविश्वास तथा डायन-प्रथा खुद-व-खुद अर्थहीन, असंगत और अनावश्यक हो जाय।

शोध टीम को पूरा विश्वास है कि अगर डायन-समस्या"के समाधान के लिए समग्रता से सोचते हुए तथा उपरोक्त सुझावों को ध्यान में रखकर कार्य-योजना बनायी जाय एवं क्रियान्वित की जाय तो 21वीं सदी के द्वार पर दस्तक दे रहे झारखण्ड क्षेत्र में इस अंधविश्वास (अभिशाप) की आड़ में कोई निर्दोष तथा कमजोर महिला न तो प्रताड़ित की जा सकेगी और न ही उसकी हत्या होगी।

परिशिष्ट

1. डायन-प्रथा निरोधात्मक अधिनिमय 1998
2. क्षेत्रीय अध्ययन के दौरान समाज के विभिन्न वर्ग के लोग, सरकारी अधिकारी, स्वयं सेवी संस्था के डायन के संबंध में संकलित धारणा या विचार
3. पीड़ा : डायन करारे जाने की
4. डायन संबंधी घटित घटनाओं का वर्णन
5. राँची, गुमला जिलों के विभिन्न थानों में प्रतिवेदित काण्ड की विवरणी
6. समाचार-पत्रों में समय-समय पर डायन-संबंधी समाचारों की कतरन

परिशिष्ट - 1

बिहार सरकार द्वारा डायन-प्रथा निरोधात्मक अधिनियम 1998 लागू कर दिया गया है जिसके मुख्य बिन्दु निम्न हैं-

डायन-प्रथा निरोधात्मक विधयेक, 1998

बिहार राज्य के आदिवासी क्षेत्रों में किसी भी व्यक्ति मुख्यतः महिलाओं को डायन करार देकर उसे प्रताड़ित करने अथवा मार डालने की प्रचलित प्रथा के निरोधात्मक उपायों हेतु डायन-प्रथा निरोधात्मक अधिनियम 1998 बनाया जा रहा है। इस डायन-प्रथा से अधिकतर महिलाएँ ही प्रभावित होती हैं। जिन्हें समाज में डायन करार देकर प्रताड़ित, अपमानित, शोषित एवं निष्काषित करने के अन्तर्गत कई बार उनकी हत्या कर दी जाती है।

धारा : 1

संक्षिप्त शीर्षक, विस्तार एवं प्रारम्भ 1

(क) यह अधिनियम डायन-प्रथा निरोधात्मक अधिनियम, 1998 के नाम से जाना जाएगा।

(ख) यह अधिनियम सम्पूर्ण बिहार राज्य में प्रभावी होगा।

(ग) यह अधिनियम दिनांक 26.01.1996 से प्रभावी माना जाएगा।

धारा : 2

परिभाषा :

इस अधिनियम के अन्तर्गत परिभाषाएं निम्न प्रकार होंगी :

(क) ''संहिता'' से तात्पर्य होगा आपराधिक प्रक्रिया संहिता-1973.

(ख) ''डायन'' से तात्पर्य होगा वह व्यक्ति जिसे किसी अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों द्वारा किसी भी व्यक्ति को हानि पहुँचाने की क्षमता रखने, हानि पहुँचाने या इसका इरादा रखने के लिए चिह्नित किया जाए और यह समझा जाय कि वह व्यक्ति काला जादू, बुरी नजर या मंत्रों से किसी व्यक्ति/व्यक्तियों अथवा समाज को हानि पहुँचायेगा।

(ग) **पहचान कर्त्ता :**

वह व्यक्ति जो किसी दूसरे व्यक्ति को डायन के रूप में चिह्नित करने हेतु अन्य व्यक्तियों को बहकाता हो या फिर अपने कार्यों से, शब्दों और व्यवहार से मदद करता हो, या जानबूझ कर यह कार्य करे, जिससे चिह्नित किए गए उस, तथा उसकी हत्या, एवं उनके सम्मान पर उसका प्रतिकूल प्रभाव प्रड़े।

(घ) **ओझा :**

यह व्यक्ति जो यह दावा करता हो कि उसमें ''डायन'' को नियंत्रित करने की शक्ति है चाहे उसे ''गुणी'' या ''ओझा'' या फिर किसी भी अन्य नाम से जाना जाता हो।

धारा : 3

डायन की पहचान :

यदि कोई भी व्यक्ति जो किसी अन्य व्यक्ति को ''डायन'' के रूप में अपने किसी भी कार्य, शब्द या व्यवहार से, चिह्नित करें, तो इसके लिए उसे अधिकतम तीन महीने के कारावास का दण्ड अथवा एक हजार रुपया जुर्माना अर्थात दोनों ही सजा का भागी होना होगा।

धारा : 4

प्रताड़ित करने का हर्जाना :

यदि कोई भी व्यक्ति जो किसी अन्य व्यक्ति को ''डायन'' के रूप में करार देकर उसे शारीरिक या मानसिक यातना एवं कष्ट देता है अथवा उसे जानबूझ कर या अनचाहे प्रताड़ित करता है तो उसे अधि ाकतम छः माह के कारावास की सजा हो सकती है, अथवा दो हजार रुपया का जुर्माना अथवा दोनों सजा दी जा सकती है।

धारा : 5

डायन की पहचान में दुष्प्रेरक :

यदि कोई भी व्यक्ति जो किसी अन्य व्यक्ति को ''डायन'' चिह्नित करने के लिए जानबूझ कर या अनचाहे अन्य व्यक्तियों को या समाज

के लोगों को उकसाता हो, षडयंत्र रचता हो या उन्हें सहायता देता हो जिससे उस व्यक्ति को हानि पहुँचने की आशंका हो अथवा हानि पहुँचे तो वैसे दुष्प्रेरक को अधिकतम तीन महीने की कैद अथवा एक हजार रुपये जुर्माना अथवा दोनों की सजा दी जा सकती है।

धारा : 6

डायन का उपचार :

किसी भी ''डायन'' के रूप में चिह्नित को शारीरिक या मानसिक यातना एवं कष्ट पहुँचाने अथवा प्रताड़ित करने हेतु झाड़-फूंक या फिर टोटका आदि द्वारा कोई कार्य किये जाने पर वैसे व्यक्ति या व्यक्तियों को अधिकतम एक साल तक के कारावास की सजा दी जा सकती है अन्यथा उसे हजार रुपये जुर्माना अथवा दो साल की सजा दी जा सकती है।

धारा : 7

परीक्षण की प्रक्रिया :

इस अधिनियम के अन्तर्गत किए गए सभी अपराध संज्ञेय एवं गैर-जमानती होंगे जिन्हें समाहित नहीं किया जा सकेगा।

धारा : 8

नियमों के निर्धारण की शक्ति :

राज्य सरकार द्वारा सरकार गजट में अधिसूचना जारी कर इस अधिनियम के अन्तर्गत प्रावधानों को लागू करने हेतु सभी आवश्यक नियम बनाए जा सकेंगे।

परिशिष्ट - 2

विभिन्न जिलों के सूचनादाताओं के डायन के संबंध में विचार

क्र. सं.	नाम एवं पता	डायन के संबंध में विचार
1.	*महेन्द्र साहु, ग्रामसेवक, बूढ़ाडीह, खूँटी*	इनका मानना है कि डायन किसी को शांति से रहने नहीं देती। उसका उपचार ओझा तंत्र-मंत्र द्वारा करता है, तब कहीं जाकर रोगी को फायदा होता है। डॉक्टर के इलाज से डायन द्वारा किया गया रोग ठीक नहीं होता है।
2.	*गाँव की शिक्षित कामकाजी महिलाएँ बूढ़ाडीह, खूँटी*	इनका मानना है कि डायन आदि सभी भ्रम हैं। हमारे जीवन में जो घटनाएँ घटती है वे ईश्वर की कृपा से होती हैं, जन्म और मरण ईश्वर के हाथ में है। मनुष्य तो सिर्फ माध्यम है।
3.	*एक ईसाई परिवार माराहातु, खूँटी*	इनका डायन आदि के बारे में कोई विश्वास नहीं है। ये कहते हैं कि हमारा धर्म सेवा करना है जो कुछ होता है वह ईश्वर की मर्जी से होता है। हमारे हर कष्ट का निवारण हमारे चर्च के पादरी करते हैं।
4.	*कुछ ग्रामीण, सिरूम पंचायत, खूँटी*	इनका डायन में विश्वास है। इनका कहना है कि गाँव के हर पाँच घर में से एक घर ऐसा है जिसमें डायन महिला रहती है। वे डायन सभी को परेशान करती हैं। उनसे बचने के लिए गाँव के लोग भगत द्वारा मंत्र से अपने-अपने घर को बंधवा देते हैं जिससे उनके प्रकोप से बचाव होता है। अगर कोई डायन महिला ज्यादा परेशानी उत्पन्न करती है तो गाँव की पंचायत द्वारा उसे सजा दी जाती है।

5.	*रामकिशुन नाग, पंचायत सेवक तथा अन्य ग्रामीण, सिलादोन पंचायत, खूँटी*	इनका डायन-प्रथा, डायन विद्या में विश्वास है। ये कहते हैं कि डायनें भूत पालती हैं और भूत के माध्यम से सभी आस-पास के लोगों को परेशान करती हैं। अपने पाले हुए भूत को खुश करने के लिए ये डायनें जीव-हत्या जैसे जघन्य अपराध करती हैं।
6.	*भवा उराँव एवं शनिचरा उराँव कुलकुमा, खूँटी*	इनका डायन में विश्वास है। डायन के विवाद को लेकर झगड़े के क्रम में ये दोनों अपने घर में रहने वाली महिला पर डायन होने का आरोप लगाते हैं जिसमें सोदाग का भगत उनकी मदद करता है। उक्त डायन महिला को इन्होंने घर से बाहर निकाल दिया। यहाँ तक कि उसे जान से मार देने की धमकी भी दी।
7.	*जोगेन्द्र बाबू (बी. डी.ओ. ऑफिस में कार्यरत तथा रामजनम सिंह, पंचायत सेवक), थाना - कोरबा ग्राम - उडुटोली, खूँटी*	इन्होंने बताया कि यहाँ के लोगों का डायन में काफी विश्वास है। डायन से सम्बन्धित अनेक घटनाएँ हमेशा देखने को मिलती हैं। हाल ही में मुन्नी साहू नामक महिला को लोगों ने डायन करार करके उसके साथ काफी मार-पीट की है। गाँववालों का कहना है कि उक्त महिला प्रतिदिन किसी घर के दरवाजे के सामने मुर्गी का बच्चा मारकर फेंक देती है, जिससे वह परिवार काफी परेशानी से जूझने लगता है। वह महिला भागने से इन्कार करने लगी, तब उसके साथ मार-पीट की गयी।
8	*शेख साहब (मौलवी)*	उनका कहना है कि उनके धर्म में डायन को शैतान कहा जाता है। वह किसी को भी नुकसान पहुँचा सकती है। चूँकि शेख साहब ओझा हैं, इसलिए वे तंत्र-मंत्र करते हैं। इलाज के दौरान मौलवी पता कर लेते हैं कि डायन है या नहीं। अगर डायन के कारण रोगी बीमार पड़ता है तब ओझा मंत्र के द्वारा अपने हाथ

		पर उस डायन की तस्वीर देख लेता है और उस पर उचित कार्रवाई की जाती है। उनका मानना है कि मंत्र में बहुत बड़ी शक्ति होती है।
9.	*पुजारी, काली मंदिर, जमशेदपुर*	डायन के बारे में इनका कहना है कि डायनों में विशेष शक्ति होती है, जिसके बल पर वे लोगों का अनिष्ट करती रहती हैं। ये डायनें शक्ति का पूजन किया करती हैं, इसलिए अक्सर अमावस्या, पूर्णिमा या शनिवार, रविवार के दिन अगर मैं रात में बाहर निकलता हूँ तो मुझे मध्य रात्रि में माँ के अन्दर में इस तरह की महिलाएँ दिखाई दे जाती हैं।
10.	*टाटा मेमोरियल अस्पताल के रोगी*	यहाँ के रोगियों का भी मानना है कि बहुत से ऐसे कष्ट होते हैं, जिनका कारण डायन, भूत आदि होते हैं। कुछ पुरुष रोगी डायन आदि के अस्तित्व को नहीं मानते। उनका कहना था कि जीवन में जो कुछ होने को रहता है, वह होता ही है।
11.	*झोझो केरकेट्टा, टाटा मेमोरियल अस्पताल की नर्स*	ये डायन आदि के अस्तित्व को नहीं मानती हैं और न ही इस प्रकार के लोगों (ओझा-भगत आदि) में इनका विश्वास है।
12.	*मुहम्मद कुर्बान, राँची*	इन्होंने बताया कि इनके गाँव की जो तेली महिलाएँ हैं, वे डायन-प्रथा में ज्यादा लिप्त हैं। वे अपनी संख्या बढ़ाने के उद्देश्य से अमावस्या तथा दुर्गापूजा की अष्टमी की रात को अपने शिष्यों को ये विद्या सिखलाती हैं। इन डायनों का काम समाज के लोगों को कष्ट पहुँचाना होता है। अगर समाज में कोई व्यक्ति ख्याति प्राप्त कर रहा है तो उन्हें वे अपना शिकार अवश्य बनाती हैं।

13.	*रामकिशोर साहू (भगत) सहजमा, खूँटी*	ये माँ दुर्गा की आराधना करते हैं और कहते हैं कि तंत्र-मंत्र में काफी शक्ति होती है। अपने मंत्र के बल पर ये हर व्यक्ति के व्यक्तित्व को जान लेते हैं और उसके व्यवहार के विरुद्ध अपने मंत्र का प्रयोग करते हैं। अगर डायनें इनसे शक्तिशाली होती हैं तब वे उन पर हावी हो जाती हैं और अपना कुप्रभाव दिखलाती हैं।
14.	*भगताइन महिला, हुटु गाँव, खूँटी*	इन्होंने कहा कि भगत, ओझा आदि देवता की पूजा करते हैं और डायनें भूतों की पूजा किया करती हैं। डायनों का जो मंत्र होता है, वह विनाशकारी होता है और भगत आदि जिस मंत्र का प्रयोग करता है, वह सहयोगात्मक और कल्याणकारी होता है।

गुमला के थाना प्रभारी बिरेन्द्र सिंह, आरक्षी अधीक्षक प्रशांत सिंह और अनुमंडल पदाधिकारी जोनाथन मुरमू का डायन के विषय में कहना है कि डायन आदि सिर्फ मन का भ्रम है और कुछ नहीं है।

गुमला के सिविल सर्जन डॉ. प्रभास कुमार का कहना था कि ये सभी अंधविश्वास है। लोगों के अशिक्षित होने के कारण उनका इन सभी बातों पर विश्वास होता है। उनका यह भी कहना है कि ग्रामीण जनजातियों को पेड़-पौधों की जानकारी कुछ ज्यादा ही रहती है उसके कुछ औषधीय गुणों को वे जानते हैं जिसका उपयोग ये ग्रामीण कुछ बीमारियों के इलाज के लिए करते हैं। जिसे 'टोटका' की संज्ञा देते हैं।

गुमला में स्वयंसेवी संस्थान के संचालक राजकिशोर सिंह का मानना है कि आज ग्रामीण-क्षेत्रों में बहुत-सी महिलाएँ डायन रूपी कुप्रथा की शिकार हैं जिनके साथ मार-पीट, अमानुषिक व्यवहार किया जाता है। गाँव से उन्हें बाहर भी निकाल दिया जाता है। अंततः उनकी हत्या कर दी जाती है। इस प्रथा में सुधार लाने के लिए ये लोग गाँव वालों के बीच शिक्षा का प्रसार कर रहे हैं और विद्यालय के छात्र-छात्राओं के साथ कुछ सामूहिक कार्यक्रम प्रस्तुत कर महिलाओं के उत्थान के लिए कार्यरत हैं। इसी संस्था की सिस्टर आइरीन ने बताया कि वह जागरूकता अभियान में मुख्य भूमिका निभा रही हैं। वह महिलाओं

को संस्था में एकत्र कर उन्हें सरकारी कार्यक्रमों की जानकारी देती हैं। साथ ही कुछ व्यवसायिक शिक्षा का भी वहाँ प्रबंध करती हैं और व्यावसायिक प्रशिक्षण के पश्चात् उन्हें सरकार से अनुदान दिलवाकर उन महिलाओं को अपना व्यवसाय शुरु करने में और उन्हें अपने पैरों पर खड़ा होने में सहयोग करती हैं।

अध्ययन के दौरान ही गुमला की एक महिला, जिसे आस-पास के लोग डायन के रूप में जानते हैं, उसके विषय में वहाँ के लोगों से जानने की कोशिश की गई। तब उन लोगों ने बताया कि उक्त महिला जिसे लोग डायन कहते हैं वह कमजोर वर्ग की है। वह महिला विवाहित है और उसके दो बच्चे भी हैं। विवाह के पाँच-छः वर्ष बाद ही वह विधवा हो गयी। आर्थिक कमी पूरी करने के लिए पड़ोसी के घर दाई का काम करने लगी। वह जिसके घर दाई का काम करती थी वह व्यक्ति अपने परिवार यानी पत्नी तथा चार बच्चों के साथ रहता था। उस घर में काम करते-करते वह महिला उस घर को अपने बेटो के नाम करना चाहती थी परन्तु इस पर उसने (दाई) असहमति व्यक्त की। जब घर का मालिक एक दिन उस महिला से बात करने गया रात में अचानक उनको मुँह से खून की उल्टी होने लगी। उसे इलाज के लिए डाक्टर के पास ले जाया गया, लेकिन मालिक की तबीयत ठीक नहीं हुई और उनकी मौत हो गयी। आस-पास के लोग उसकी मौत पर काफी दुःखी हुए, पर वह महिला अपने बाल खोलकर, लाल चूड़ी पहन कर बैठ गयी तथा रोने वालों को गाली देने लगी और उसे कोई कष्ट, दुःख नहीं हुआ। उसके पूजा-पाठ में दिन-प्रतिदिन वृद्धि ही होती गयी और किसी को कुछ कह देती वही होने लगा।

उसके कार्यकलाप भी अन्य महिलाओं से कुछ भिन्न हैं। उसके घर के आँगन में कई प्रकार के पिंड एवं झंडी लगे हुए हैं, उन झंडियों में लाल चूड़ी लगी हुई है। अमावस्या और पूर्णिमा के दिन बहुत सारी महिलाएँ सिर पर कलश लेकर उसके घर पूजा करने आती हैं। लोगों का कहना है कि वे औरतें अपने तंत्र-मंत्र की सिद्धि करती हैं। आस-पास का कोई भी व्यक्ति उस महिला के घर नहीं जाता है। अगर कोई उसके घर चला गया तब उसके साथ कुछ-न-कुछ अनिष्ट अवश्य हो ही जाता है।

अध्ययन के दौरान परसुडीह (जमशेदपुर) के तांत्रिक सुरेश भगत ने बताया कि डायन तंत्र-क्रिया के प्रयोग द्वारा विघटनात्मक कार्य करती है। जिसे वह परेशान करना या नुकसान पहुँचाना चाहती है उसे इस प्रकार के नुकसान पहुँचाती है। यहाँ तक कि उसकी जान भी ले लेती है। उन्होंने यह भी बताया

कि जिस तंत्र-क्रिया का प्रयोग तांत्रिक करते हैं उससे उनके सामने डायन का प्रतिबिम्ब बन जाता है और वे बता सकते हैं कि अमुक महिला डायन है या नहीं।

सोनारी, जमशेदपुर की महिला शिक्षिका का कहना है कि समाज में हर प्रकार के व्यक्ति पाये जाते हैं और उनमें डायन भी हो सकती है। ऐसी महिलाओं को अनेक प्रकार की समस्याओं से जूझना पड़ता है।

कदमा, जमशेदपुर की महिला कॉलेज की व्याख्याता रूपम झा का मानना है कि समाज में डायन महिला का अस्तित्व संदेहास्पद है। व्यक्तिगत स्वार्थ के ही कारण किसी महिला को जबरन डायन साबित कर दिया जाता है। और उन्हें सामाजिक रूप से प्रताड़ित किया जाता है।

मानगो, जमशेदपुर की कमजोर महिला उषा रानी जिसे आस-पास के सभी लोग डायन कहते हैं उसने अपने घर के आँगन में विभिन्न प्रकार के झंडे एवं त्रिशूल गाड़ रखे हैं, वे झंडे भिन्न रंग के भी थे। उषा रानी ने बताया कि पास के ही गाँव में एक ओझा रहता है जिसने अपने पड़ोसी के बच्चे के मरने का कारण उसे बताया। इसके बाद से आस-पास के लोग उषा रानी से मिलना पसंद नहीं करते हैं। उसके खुशी या गम में कोई शरीक नहीं होता है। अगर वह घर से बाहर निकलती है तब महिलाएँ अपने बच्चों को लेकर घर के अंदर घुस जाती हैं। उषा रानी की दो लड़कियाँ हैं, उनकी शादी हो चुकी है और वे अपनी-अपनी ससुराल में रहती हैं। उषा रानी अकेली अपने पति के घर में रहती है और पेंशन से गुजर-बसर करती है। समाज में उसकी पहचान डायन के रूप में हो गयी, लेकिन वह कुछ ऐसी विद्या जानती है इससे इन्कार करती है।

जमशेदपुर की एलिजाबेथ का मानना है कि डायन आदि सब अंधविश्वास है। यह सब दुश्मनी के कारण किया जाता है। किसी महिला को प्रताड़ित करने का एक बहाना है। अगर कोई महिला अकेली रहती है, उसके नाम कुछ जमीन-जायदाद है, उसको हड़पने के उद्देश्य से उसके रिश्तेदार उस पर डायन होने का आरोप लगा देते हैं। उन्होंने यह भी कहा है कि अशिक्षित ग्रामीणों के बीच इस प्रकार के अंधविश्वास की भावना है। उन्होंने यह भी बताया कि गाँव के ओझा-तांत्रिक अपने आर्थिक लाभ के उद्देश्य से भी इस प्रकार का ढोंग करते हैं और जो महिला उनकी बातों को नहीं मानती उन पर किसी भी प्रकार का आरोप लगाकर डायन घोषित कर दिया जाता है।

प. सिंहभूम के पूर्व उपायुक्त अमित खरे ने डायन के संबंध में घटित अपने

एक घटना का जिक्र करते हुए बताया कि जब वह प. सिंहभूम के उपायुक्त थे, किसी निरीक्षण के सिलसिले में जा रहे थे तभी उन्होंने देखा कि कुछ व्यक्ति मिलकर एक महिला को बुरी तरह से पीट रहे हैं। उन्होंने उनके पास जाकर घटना की पूछताछ की। घटनास्थल पर उपस्थित लोगों ने बताया कि उक्त महिला डायन है और बहुत से बच्चों को इसने मार डाला है। इस बीच भी लोग उस महिला को मारपीट रहे थे तथा उसे गोबर और मल जबरन खिला रहे थे। उपायुक्त के काफी समझाने के बाद कहीं मामला जाकर शांत हुआ। तब उन्होंने लोगों से कहा कि मैं इस महिला को अपने ऑफिस (कार्यालय) में ले जाकर काम देता हूँ और यह महिला मुझे प्रतिदिन चाय और पानी देगी। अगर सचमुच में यह महिला डायन होगी और मुझे पानी पिलायेगी तो हो सकता है कि एक महीने के अन्दर मैं मर जाऊँ। अगर मैं मर गया तो आप सभी जो चाहे इनके साथ कार्रवाई कर सकते हैं। आज भी वह महिला उस कार्यालय में कार्यरत है और अपना कार्य बखूबी निभा रही है। इसी प्रकार जनजातीय क्षेत्र के अन्य बड़े अधिकारी चाहें तो बहुत-सी भुक्तभोगी महिलाओं के कल्याण के साथ-साथ समाज का भी कल्याण हो सकता है और समाज में व्याप्त इस प्रथा के प्रति लोगों की विचार-धारणा में परिवर्तन लाया जा सकता है।

प. सिंहभूम के पूर्व उपायुक्त सुमन रहाटे का विचार है कि बहुत-सी महिलाएँ जिन पर डायन का आरोप लगाया गया है। वे उनके पास जाती हैं तब वे ऐसी महिलाओं, जिन्हें समाज में प्रताड़ित किया जा रहा है, को रोजगार प्रदान करवाने और उनके जीवन के लिए सही राह दिखलाने की कोशिश करती हैं। उन्होंने दो संथाली महिलाओं जिन पर यह आरोप लगाया गया था, को लिए ऑफिस में कैंटीन खोलने और कैंटीन चलाने की पूरी व्यवस्था की। एक महिला को ऑफिस में सफाई कार्य में भी लगाया गया है। इस प्रकार वे अपनी तरफ से इस तरह की महिलाओं की मदद करने में प्रयासरत हैं।

परिशिष्ट - 3

पीड़ा : डायन करारे जाने की

क्र. सं.	नाम एवं पता	कहानी
1.	चरकी देवी पति - मोहन महतो पिता - शिव कुमार महतो करमा सिंहपुर जिला - बोकारो	13 वर्ष की आयु में चरकी देवी की शादी चरणु महतो से हुई। उसका पति शराबी था। शराब के नशे में सदा अपनी पत्नी के साथ मार-पीट करता। जब चरकी की एक पुत्री हुई तब चरणु ने अपनी पुत्री को जलाकर मार डाला। पति के इस व्यवहार से तंग आकर चरकी ने अपने पति से छुटकारा पाया। बाद में मोहन महतो से शादी की। एक दिन चरकी धान के खेत में धान काट रही थी। वहीं खाना खा रही थी कि एक महिला ने उस पर दूसरे दिन आरोप लगाया कि वह डायन है। उसने मुझे खाते देखा, जिस वजह से मैं बीमार पड़ गयी। इसी घटना के बाद से उस पर डायन होने का पहाड़ टूट पड़ा और अब तक वह अपमान का घूंट पीकर जी रही है।
2.	जुगती देवी पति - जूना डोम हरना बस्ती थाना - कसमार जिला - बोकारो उम्र - 60 वर्ष	अपने विवाह के पश्चात् जुगती ने तीन पुत्रों और तीन पुत्रियों को जन्म दिया, किन्तु संयोगवश उसके तीनों पुत्र मर गये। पुत्रों की मौत के बाद उसके परिजन तथा रिश्तेदारों ने उसे डायन कहना शुरू कर दिया। जुगत देवी के साथ-साथ उसके पति और पुत्रियों को बिरादरी के लोग प्रताड़ित करने लगे। इसी क्रम में उसके पति की मौत हो गयी। अगर गाँव में कोई अप्रिय घटना घटती या कोई बच्चा बीमार पड़ता तो इसका दोषी उसे ही माना जाता।

		उसे लोग हर तरह से प्रताड़ित करते। यहाँ तक कि उसको अपना घर छोड़ने के लिए मजबूर किया गया, लेकिन इसी माहौल में वह अब तक जी रही हैं।
3.	कमली देवी पति - चरका घांसी हरना बस्ती थाना - कसमार जिला - बोकारो उम्र - 65 वर्ष	कमली देवी के तीन पुत्र और एक पुत्री है। उसकी ससुराल के लोग उसके साथ अच्छा व्यवहार नहीं करते हैं। उसे डायन कहकर पुकारते हैं। पति की मृत्यु तथा अपने तीनों पुत्रों के बाहर रहने के कारण वह दाई का काम करके अपनी जीविका चलाती हैं। अगर गाँव में कोई बच्चा बीमार पड़ता है, तो इसका आरोप कमली देवी पर ही लगाया जाता है। यहाँ तक कि लोग उसे जान से मार डालने की भी धमकी देते हैं।
4 .	युलू बाला पति - दुखी महतो शृंगार बेड़ा, फुसरो	युलू बाला की शादी 10 वर्ष की उम्र में बुधना महतो के साथ हुई थी, परन्तु उसके परिवार वाले उसके साथ अच्छा व्यवहार नहीं करते थे। अतः ससुराल वालों से तंग आकर वह अपने पिता के यहाँ रहने लगी। बाद में दुखी महतो के साथ दूसरी शादी के कुछ दिनों पश्चात् उसे बालों में जट बनना शुरू हो गया। तब गाँव वाले उसे डायन कहने लगे। यहाँ तक कि गाँव में कहीं भी उसका आना-जाना बन्द करवा दिया गया। उसे पीने का पानी भी दूसरे गाँव से लाना पड़ता था। किसी के बीमार पड़ने अथवा किसी प्रकार की अशुभ घटना का दोष उसी पर आता था। उसका पति भी लोगों की बातों में आकर उसे डायन कहता था। उसके साथ मार-पीट की जाती थी। अब पत्तल और दोना बनाकर वह अपना जीवन-यापन करती है।

5.	मानी कुई	मानी कुई पर भी डायन होने का आरोप लगाकर लोगों ने उसे मारा-पीटा। बीच -बचाव के क्रम में उसके पति तथा एक पुत्र की मौत हो गयी। मानी कुई के तीन बेटे और एक बेटी थे। उसके ऊपर डायन होने का आरोप" इसलिए लगाया गया था कि सूरज बेसरा नामक व्यक्ति शराब का बहुत ही ज्यादा सेवन किया करता था, बाद में उसे टी.वी. हो गया और काफी इलाज के बाद भी वह ठीक नहीं हुआ और उसकी मृत्यु हो गयी। तब उसकी मौत का जिम्मेदार लोगों ने मानी कुई को ही बताया और उसके बाद उस पर प्रताड़ना का सिलसिला जारी हो गया।
6.	दुखनी देवी पति - भुवनेश्वर महतो कसमार बगदा जिला - बोकारो	दुखनी देवी की पहली शादी राम किशुन महतो के साथ हुई थी। शादी के बाद बच्चा नहीं होने के कारण सास-ससुर उसे प्रताड़ित करने लगे और कहने लगे कि मायके से भूत लेकर आयी है, इसी कारण बच्चा नहीं होता। काफी प्रताड़ित करने के बाद ससुराल वालों ने उसे घर से निकाल दिया। तब उसने दूसरी शादी भुवनेश्वर महतो से की। शादी के बाद गोतनी ने उस पर बांझिन और डायन होने का आरोप लगाया। दुखनी के पति की मौत, कुआं खोदते समय पैर फिसल कर गिर जाने से हो गयी। पति की मौत के बाद उसकी सम्पत्ति हड़पने के ख्याल से उसके परिवार वाले उसे डायन करार देने लगे। तब वह अपने पिता के घर आकर रहने लगी। उसी बीच उसकी चचेरी बहन की बच्ची की मौत भी हो गयी। अब तो पूरा परिवार ही उसे डायन कहकर पुकारता है।

7.	करुणा देवी पति - बाउरी कुभंकार भोलाडीह, जमशेदपुर उम्र - 50 वर्ष	जब इसके छोटे पुत्र सिद्धेश्वर की बीमारी के बाद मृत्यु हो गयी, तब गाँव के लोगों ने इसके लिए जिम्मेवार पति और पत्नी दोनों को ठहराया। इन दोनों को डायन करार देकर इनका सामाजिक बहिष्कार कर दिया गया। दोनों पति-पत्नी को गया ले जाया गया। वहाँ ले जाकर 1995 में इनके डायन पति बाउरी के बाल मुंड़वाकर पिण्डदान कराया गया। किन्तु करुणा को डायन घोषित किया गया। करुणा देवी ने ऐसा नहीं किया इस कारण उसके शरीर से डायन विद्या समाप्त नहीं हुई और उसे प्रताड़ना का शिकार होना पड़ रहा है।
8.	उल्लासी गोराईं पति - सनातन गोराईं ग्राम - सनकोसाईं	उल्लासी गोराईं के पड़ोसी सदानन्द गोराईं की पुत्रवधू को जुड़वाँ बच्चा हुआ था। दुर्भाग्य से दोनों बच्चों की मौत हो गयी। उनके मौत का जिम्मेवार उल्लासी गोराई को ठहराया गया। इस पर फरवरी 1996 में डायन होने का आरोप लगाया गया। आरोप लगाकर उसके घर को क्षतिग्रस्त कर दिया गया। उसे अपमानित किया गया। जब उल्लासी के पति ने इसके विरुद्ध मामला दर्ज करवाया तब परेशान होकर सदानन्द गोराई ने गाँव वालों को उल्लासी के खिलाफ भड़का दिया।
9.	मुंडारी सरदार पति - लखीन्द्र सरदार मुरदायी साइद बस्ती थाना - पोटका प. सिंहभूम उम्र - 46 वर्ष	मुंडारी सरदार ने बताया कि किसी बात को लेकर उनका पड़ोसियों से विवाद हो गया। कुछ दिनों के बाद जमीन-जायदाद को लेकर झंझट हो गया। इसी बीच एक पड़ोसी का बच्चा बीमार पड़ गया। जब उस बच्चे को लेकर वे लोग ओझा के पास गये तब ओझा ने षड्यंत्र के तहत मुंडारी

		को बच्चे के बीमारी का कारण बताया और उसे डायन करार दिया। इस पर पड़ोसी ने उस पर कुल्हाड़ी से हमला किया और उसे बुरी तरह से घायल कर दिया। जब मुंडारी ठीक होकर अस्पताल से घर आयी तब गाँव वालों ने उससे मिलना बन्द कर दिया। अब गाँववाले उसे डायन के रूप में निश्चित कर चुके हैं।
10.	सुमित्रा तांती	सुमित्रा तांती के पति रेलवे में काम करते हैं। इनके पति काफी दिनों से बीमार थे। बाद में उनका भतीजा भी बीमार पड़ गया। पति ठीक-ठाक हो गये लेकिन घर वालों ने उसे डायन मान लिया। परिवार में किसी भी तरह के बीमारी का कारण सुमित्रा तांती को ही मानने लगे। इसके साथ ही साथ घर वालों ने उसे प्रताड़ित करना भी शुरु कर दिया। घर वालों के अलावा गाँव वाले भी अब उन्हें डायन कहकर सम्बोधित करने लगे और उनका बहिष्कार किया जाना शुरु हो गया।
11.	पार्वती मांझी (50 वर्ष)	पार्वती मांझी को पहले गाँववालों के समक्ष डायन के रूप में प्रचारित किया गया। इस तरह का प्रचार सुखराम मांझी के भाई बिकू मांझी ने किया। प्रचार करने के पश्चात् वह गाँव के लोगों को लेकर पार्वती की हत्या करने के उद्देश्य से उसके घर आया। पार्वती की हत्या करने के बाद परिवार के अन्य लोग उसका विरोध न कर सके और हत्या का कोई गवाह न बचे ऐसा विचार कर अन्य सदस्यों को भी मार डाला गया। हत्या करने का मुख्य उद्देश्य भाई की सम्पत्ति पर कब्जा करना था। लखन, सुखराम मांझी का पुत्र ही किसी तरह बच पाया था, जिसने इसकी सूचना पुलिस को दी।

12.	सनातन तामसोय ग्राम - डेबरावीर थाना - मंझारी प. सिंहभूम	सनातन तामसोय की हत्या भी डायन के रूप में आरोपित करने के पश्चात् ही की गयी थी। सनातन के साथ-साथ उसकी पत्नी पर भी डायन होने का आरोप था, इसलिए उसकी पत्नी और पाँच बच्चों की 18 दिसम्बर 1995 को एक साथ हत्या का कारण यह था कि सनातन तामसोय के पास 70 बीघा जमीन थी और वह अपने भाई की हत्या कर उन जमीन पर कब्जा करने में कामयाब हो गया।
13.	मक्को सुन्दी पति - चरका सुन्दी ग्राम - ठाकुर गुडु थाना - सदर (चाईबासा) प. सिंहभूम उम्र - 40 वर्ष	मक्को सुन्दी ने बताया कि एक दिन उसके देवर को एक घाव (फोड़ा) हो गया और इससे उसे काफी दर्द हो रहा था। फोड़े के ठीक न होने पर इसका कारण उन्होंने मक्को पर लगाया कि इसी ने डायन विद्या के मंत्रों से मुझे ये रोग दिया है। कुछ दिनों पहले से ही दोनों भाइयों के बीच अपने जमीन-जायदाद को लेकर विवाद चल रहा था। तब सुन्दी मक्को को 1995 में डायन घोषित कर उसके पति का भाई गाँव के लोगों को एकत्रित कर उसके घर पर पत्थर फेंकने लगा। अन्ततः उसे गाँव से प्रताड़ित कर बाहर भगा दिया गया। वर्तमान में वह यात्री निवास, चाईबासा में रह रही है।
14.	छुटनी महतो पति - धनंजय महतो ग्राम - महतानडीह पो. - तबलापुर जिला - प. सिंहभूम उम्र - 34 वर्ष	एक बार धनंजय महतो की भतीजी, जो अक्सर उनके पास रहती थी, का स्वास्थ्य खराब हो गया। वह बीमार पड़ गयी। तब उसके रिश्तेदारों ने उस पर डायन होने का आरोप लगाया। इस पर उस बच्ची के माता-पिता ने डायन का पता लगाने के लिए ओझा को बुलवाया। ओझा ने छुटनी

		को पूजा-सामग्री लाने को कहा। इसी बीच ओझा को गाँववालों ने तथा रिश्तेदारों ने शराब पिलाया। शराब पीने के बाद ओझा ने गाँववालों के सामने उसे डायन घोषित कर दिया। यह घटना 1994 की है। इसके बाद जबरन उसे मल पिलाया गया, ताकि उसकी डायन-विद्या समाप्त हो जाये। उसे मार डालने की भी कोशिश की गयी। अब वह अपने पति और बच्चों के साथ अपने माता-पिता के घर रह रही है।
15.	चान्दो बादिया की माँ ग्राम - पराया थाना - चक्रधरपुर जिला - प. सिंहभूम	चान्दो के माता-पिता के पास एक पैतृक धान का खेत था, जिस पर वे खेती करके अपनी जीविका चलाते थे। उस जमीन पर विवाद चल रहा था। दूसरे पक्ष के व्यक्ति ने उनसे (चान्दो के पिता से) जमीन छोड़ने को कहा, पर उन्होंने जमीन छोड़ने से इंकार किया। इसी बीच गाँव में 1995 में दो बच्चों की मृत्यु हो गयी। गाँव के लोगों ने उसकी माँ पर डायन होने का आरोप लगाया। परिवार वालों को 'मागे' (त्यौहार) में बुलाया गया और एक-एक कर सभी को मौत के घाट उतार दिया गया। चान्दो उसी क्रम में बेहोश हो गयी थी। जब उसको होश आया तब वह अपनी जान बचाकर दूसरे गाँव चली आई। उसने पुलिस की मदद ली। अभी जिला प्रशासन की ओर से वह एक कॉलेज छात्रावास में रह रही है। उसका कहना है कि अगर वह अपने गाँव वापस गयी तो लोग उसे मार डालेंगे।

परिशिष्ट - 4

डायन-संबंधी कुछ घटनाओं का वर्णन

(1) एक सूचनादाता ने अपने साथ घटित घटना का वर्णन कुछ इस प्रकार किया कि उनके गाँव में पानी से भरा गड्ढा था जिसे वहाँ की स्थानीय भाषा में 'झोझो पानी' कहा जाता है। उस पानी से भरे गड्ढे में सूचनादाता और उनके मित्र 15 फीट ऊँचाई से छलांग लगाते तथा स्नान करते थे। एक दिन की बात है कि वे प्रत्येक दिन की तरह उस गड्ढे में कूदे। इसी क्रम में एक पत्थर से उनके बायीं कमर और पेट के मध्य चोट लगकर कट गया। इलाज के लिए उन्हें अस्पताल ले जाया गया, लगभग एक महीने तक अस्पताल में इलाज होने के बावजूद वे चलने-फिरने में असमर्थ थे। उनके माता-पिता को उनके रिश्तेदारों और पड़ोसियों ने सलाह दी कि ये चोट अस्पताल में ठीक नहीं होगी ये किसी डायन का किया है इसलिए अपने लड़के को एक ओझा, जिनका नाम लक्ष्मीनाथ था, जो ग्राम - किलगा, प्रखंड - बसिया, जिला - गुमला के हैं, के पास ले जाने को कहा। ओझा ने सूचनादाता को अपने पास लाने को कहा। उनके पिता एक रात अस्पताल से चुपके से रात में उस ओझा के पास ले गये। पहले से ही उस ओझा की माँगें, काला बकरा और कुछ मुर्गे पूरी की जा चुकी थीं। सूचनादाता के वहाँ जाते ही लक्ष्मीनाथ ओझा ने उनकी नाड़ी पकड़ी, माथा छुआ और उनके परिवार वालों से शपथ दिलवाकर बताया कि यदि अपने बेटे को भला चंगा देखना चाहते हो तो डायन को कुछ मत कहना और बाद में डायन का नाम बताते हुए कहा कि मैं अपनी मंत्र-विद्या से डायन को भगा दूंगा।

इसके बाद ओझा सूप में अरवा चावल लेकर कुछ मंत्रोच्चारण करने लगा तत्पश्चात् सफेद और काले रंग के मुर्गे को सूप में पड़े चावल के दानों को चुगने के लिए कहा, साथ ही बकरे को भी कुछ खाने को दिया। मुर्गे ने सूप के नीचे के दानों को चुगकर सूप में पड़े दानों को चुगा। तब ओझा खुश होकर बोला - ऐखन देखानी, डायन कैसे नी भागी, डायन धईर रहे से ले भला छउवा बेस न भई। यानी अभी देखो, डायन कैसे नहीं भागेगी, बच्चे को डायन पकड़ी थी इसी कारण से ठीक नहीं हो पा रहा था।

इसके बाद ओझा पालथी भरकर बैठ गया। करंज तेल का दीपक जलाया, और दीपकों को जलाने से मना कर दिया। उसने कई तरह से मंत्रोच्चारण किया और बीच-बीच में कुछ भूतों का नाम भी लिया। सूचनादाता को ओझा के

सामने बैठा दिया गया। वह बीच-बीच में ओझा द्वारा किये जाने वाले भूत-संबंधी उच्चारण से डरते थे तब उनकी माँ दौड़कर उनके पास आती, पर उन्हें छूती नहीं थी और उन्हें कहती - 'ना डराबे बेटा, दवाई करथंय' यानी मत डरो बेटा, दवा कर रहे हैं। उनके डरने से ओझा लक्ष्मीनाथ बोलता - बाप रे! डायन भागेल नी खोज थे। (बाप रे! डायन भागना नहीं चाह रही है।) पुनः ओझा मंत्रोच्चारण करते-करते इतना आत्मविभोर हो खड़ा होकर सिर घूमाता कि बाल बिखरने लगते और वस्त्र भी खुल जाते थे। इस मुद्रा को स्थानीय भाषा में 'छांटना' कहते हैं। इसका अर्थ ग्रामीण भूत या डायन के भगाने की सर्वोच्च क्रिया से करते हैं।

इन सभी प्रक्रियाओं के पश्चात् ओझा ने उनके परिजनों से यह दावा किया कि अब डायन आपके बच्चे के ऊपर से भाग गई है और आपका बच्चा अब पूर्णतः ठीक हो जायेगा। अब कारण जो भी रहा हो, लेकिन तबीयत ठीक हो गयी।

(2) सूचनादाता श्री बैजनाथ सेठ ने डायन होने की पुष्टि में अपने पर बीती घटना का उल्लेख करते हुए बताया कि घटना 1971 की दीवाली की रात करीब 2 बजे की है। उस वर्ष राँची कॉलेज में आई.एससी. के छात्र थे। दीवाली की छुट्टी मनाने के लिए वे राँची शहर से अपने गाँव परसी, थाना-तमाड़, जिला-राँची गये हुए थे। परम्परागनुसार उस वर्ष भी दीवाली की काली अमावस्या की रात को गाँव के लोग छोटी-बड़ी टुकड़ियों में जगह-जगह पर जुआ खेल रहे थे। वे भी खाना खाने के बाद अपने माता-पिता को बिना सूचना दिए डरते-डरते करीब 10 बजे रात को अपने ग्रामीण दोस्तों के पास जुआ खेलने के स्थान पर चले गये। माता-पिता से डाँट सुनने तथा उनके जागने से पहले घर पहुँचने की चिंता के डर से वे दोस्तों से विदा लेकर करीब 2 बजे रात के बाद घर के लिए चल पड़े। गाँव के बीचो-बीच जो मुख्य रास्ता से वह हाथ में एक डंडा लेकर घर की ओर आ रहे थे, तभी उनकी नजर कुछ दूर आगे किसी आदमी पर पड़ी जो अपने सिर पर मध्यम लौ से जलता हुआ दीपक लेकर जा रहा था। उन्हें लगा कोई जा रहा है, क्यों नहीं उसके साथ हो लिया जाय। इसी उद्देश्य से वे जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाकर उसकी ओर बढ़े तो देखा कि एक अर्द्धनग्न औरत अपना मुँह छुपाने की कोशिश कर रही है। उसके शरीर का निचला भाग लगभग नग्न, ऊपरी भाग में बहुत ही छोटा, लेकिन गंदा या रंगीन कपड़ा लपेटने का प्रयास करती, माथे पर नया सूप, उसके ऊपर कुछ सामग्री और उसके ऊपर छोटा जलता हुआ दीपक एवं दीपक को भी नये बाँस की बनी डाली से ढंके हुई

है। जैसे ही वह उस औरत को पहचानने की कोशिश करने लगे वह एक तरफ दुबकने का प्रयास करने लगी। कई बार पूछने पर उसने उत्तर नहीं दिया। तब वह थोड़ा भय और अधिक गुस्सा के कारण उसके माथे पर रखे दीपक एवं डाली के विषय में पूछा और उतारने का प्रयास किया, इतने में वो औरत जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाते हुए अंधेरे में भागने का प्रयास करने लगी वह तब उन्होंने गुस्से से दीपक एवं सूप डंडे से पीट कर नीचे गिरा दिया। इन घटना के बाद वह औरत कड़क कर बोली कि तुमने यह अच्छा नहीं किया - तुम्हारा अच्छा नहीं होगा, तुमने मेरा किया धरा सारा और यात्रा को नष्ट कर दिया। उस औरत की आवाज निकलते ही बैजनाथ सेठ ने पहचान लिया कि वह तो पड़ोस की ही एक अन्य जाति की अधेड़ उम्र की महिला है। गाँव के रिश्ते में वह उनकी बड़ी लगती थी। उन्होंने उसी रिश्ते से संबोधित करते हुए कहा कि नंगी हालत में इतनी रात को आप कहां से दीपक जलाकर आ रही हैं। तुम तो डायन हो गयी हो। उस औरत ने कहा- बेटा, तुम तो जान ही गये हो कि मैं डायन हूँ और अमावस्या की रात हमलोगों के लिए सबसे महत्वपूर्ण होता है और मैं गाँव के बाहर फलां पीपल वृक्ष के नीचे से अपनी सहेलियों के साथ तंत्र-मंत्र सिद्ध करके तथा नाच-गाकर घर आ रही थी कि तुमने सब बर्बाद कर दिया, अगर ये सारी बातें तुम अपने पिताजी या किसी और को बताओगे तो अच्छा नहीं होगा। तब तक श्री सेठ थोड़ा डर भी गये थे, लेकिन इसका आभास उन्होंने होने नहीं दिया और पुनः डंडे से सामग्रियों को पीटने एवं गाँव में तुरन्त हल्ला करके सारा भेद खोलने का आक्रोश दिखाया। तब वह और बोली - देखो, हमलोग तो रिश्ते में माँ-बेटा लगते हैं, तुम ये बात किसी और को मत बतलाना और मैं भी अपने जीवन-काल में किसी का कुछ नहीं बिगाड़ूंगी। इसके बाद श्री सेठ और वह महिला दोनों साथ-साथ चलते रहे। महिला आगे-आगे और सेठ उसके पीछे ताकि वह पीछे से तंत्र-मंत्र द्वारा उनका कुछ बिगाड़ न पाये। इस क्रम में उस औरत से कहा कि अगर वह डायन विद्या के विषय में कुछ बता दे तो वे किसी को एवं पिताजी को भी कुछ नहीं कहेंगे। वह बोली कि मैं अगले तीन दिन के बाद बता दूंगी। तुम हमारे घर आना, दोपहर में तुम्हारे बड़े बाबा घर पर नहीं रहेंगे, वह बाजार जायेंगे। चूंकि बचपन से ही सेठ जी काफी साहसी प्रवृति के रहे हैं इसलिए बिना डरे डायन के कार्यकलापों को जानने की जिज्ञासा से उससे मिलने उसके बताये हुए स्थान पर गये। तब उक्त डायन महिला ने अपने कार्यकलापों और विद्या के बारे में निम्नलिखित बातें बतायी :

डायन औरतें प्रायः विवाहित एवं विधवा या कभी-कभी अविवाहित भी होती है। यह एक हानि पहुँचाने वाली राक्षसी-विद्या है। इसका मंत्र डेढ़ शब्द या डेढ़ लाइन का होता है। साथ में गीत भी गाया जाता है। यह विद्या द्वेष, बदला, सताने एवं शौकिया तौर पर भी सीखा जाता है। इस विद्या को जानने वाली स्त्री को डायन एवं पुरुष को बोकस (तमड़िया भाषा में) तथा बिसाहा भी कहा जाता है। कुछ तो अपने से ही यह विद्या सीखना चाहते/चाहती हैं और कभी-कभी तो डायन या बोकस को अपने शिष्यों (चेलों) की संख्या बढ़ाने के लिए ये विद्या कायदे से सिखलानी पड़ती है। इसके लिए पहले अनजाने में गीत सिखलाना पड़ता है, तब बाद में गीत का अर्थ समझाते हुए तंत्र-मंत्र सिखाना एवं फंसाना पड़ता है। अमावस्या की आधी रात को सभी डायनें मिलकर गाँव के बाहर किसी खास स्थान या खास मकान में नंगे तथा ठुठकू बढ़नी (घिसा हुआ छोटा झाड़ू) कमर में बांधकर और आँखों में काजल माथे में राख और कोयले का कालिख लगाकर एवं दीपक जलाकर नाचती हैं एवं अपने आराध्य को संतुष्ट करने की कोशिश करती हैं। शिष्य को पूर्ण मंत्र की सिद्धि देने के दिन दक्षिणा के रूप में किसी एक जीव के कलेजे को देवता को अपनी शक्ति से चीर कर चढ़ाया जाता है/खाया जाता है। विद्या सिद्ध हो रही है या नहीं इसकी जानकारी करने के लिए नौसिखुआ डायन मुनगा वृक्ष, अमड़ा वृक्ष पर अपने मंत्र का प्रयोग कर उसे सुखा देती है। साथ ही बच्चों को रुलाना, किसी के पैर में दर्द करना एवं अन्य रूपों से सता कर अपनी विद्या का प्रभाव देखती हैं। डायन या बोकस किसी को सता तो सकते है, लेकिन किसी को जान से मार नहीं सकते इसके लिए उन्हें जहर का प्रयोग करना पड़ता है। अगर किसी डायन को साल के पत्ते में खाना खिला दिया जाय या किसी भी रूप में आदमी का मल खिला दिया जाय तो उसकी विद्या भ्रष्ट हो जाएगी। वह डायन महिला यह भी बताती है कि डायन महिला को मंत्र के साथ-साथ यंत्र-तंत्र, जैसे- पैर का धूल, सिर का बाल, घर की मिट्टी, चाल का खपड़ा आदि के उपयोग का तरीका भी सही रूप में आना चाहिए।

श्री बैजनाथ सेठ का विश्वास है कि डायन/बोकस आदि का अस्तित्व तो समाज में है, परन्तु इनकी विद्या उतनी ज्यादा प्रभावशाली नहीं है जितना ग्रामीण, अनपढ़ विश्वास करते हैं।

परिशिष्ट - 5

विभिन्न थानों में प्रतिवेदन काण्ड की विवरणी

जिला राँची

वर्ष 1995

थाना का नाम	काण्ड सं./धारा	अभियुक्त का नाम/पता एवं स्थिति
1. माण्डर	25/95 दिनांक 24.03.95 302/201 भा.द.वि.	एतवरीया उराईन, उम्र 40 वर्ष सा. पीपरटोली, थाना माण्डर (मृत)
2. नामकुम	40/95 दिनांक 01.05.95 302 भा.द.वि.	शनिचरवा कच्छप सा. जोसेफ पाहन टोली, थाना नामकुम (मृत)
3. सिल्ली	26/95 दिनांक 22.05.95 302 भा.द.वि.	सहोदर महतो, ग्राम सोसो, थाना सिल्ली (मृत)
4. अड़की	18/95 दिनांक 08.05.95 302/323/34 भा.द.वि.	सानो मुण्डाईन सा. बारीडीह, थाना अड़की (मृत)
5. लापुंग	32/95 दिनांक 02.06.95 302/34 भा.द.वि.	मकदली मुण्डाईन, 70 वर्ष सा. बरकाकुंडा, थाना लापुंग (मृत)
6. मुरहू	49/95 दिनांक 14.07.95 302/201 भा.द.वि.	राडी मुण्डाईन, सा. आरीडीह, थाना मुरहू (मृत)
7. खेलारी	55/95 दिनांक 19.07.95 302 भा.द.वि.	दुलार गंजु का पिता, सा. जेईली हुटांड़, थाना खेलारी (मृत)
8. नामकुम	117/95 दिनांक 23.10.95 302/201 भा.द.वि.	सिसलीया लकड़ा, सा. उडम कोचा, थाना नामकुम (मृत)

वर्ष **1996**

थाना का नाम	काण्ड सं./धारा	अभियुक्त का नाम/पता एवं स्थिति
1. तोरपा	22/96 दिनांक 02.06.96 302/201 भा.द.वि.	बोधा कोंगाड़ी, सा. कमरासिका, थाना तोरपा (मृत)
2. खेलारी	60/96 दिनांक 17.07.96 302 भा.द.वि.	रूपेश उराईन, सा. मायापुर, सरना टोली, थाना खेलारी (मृत)
3. बरियातु	66/96 दिनांक 14.07.96 302 भा.द.वि.	मंगरा मुण्डाईन, सा. हरिहर सिंह रोड, मोराबादी, थाना बरियातु (मृत)
4. सदर	96/96 दिनांक 17.09.96 302/201 भा.द.वि.	शनीचरी देवी, सा. नेवड़ी, थाना सदर (मृत)
5. नामकुम	138/96 दिनांक 18.09.96 302/201 भा.द.वि.	छठु महतो की पत्नी, सा. कुजु पहलदाग, थाना नामकुम (मृत)
6. नामकुम	147/96 दिनांक 25.09.96 302 भा.द.वि.	हरि लोहरा, सोमर सराय, सा. उलातु, थाना नामकुम (मृत)
7. खूँटी	103/96 दिनांक 01.09.96 302/34 भा.द.वि.	बंधना पाहन की माँ, सा. टुन्डीडीह, थाना खूँटी (मृत)
8. मुरहू	40/96 दिनांक 23.09.96 302 भा.द.वि.	चन्दा मुण्डाईन तथा उनका लड़का सा. सईटोला, थाना मुरहू (मृत)
9. रनिया	20/96 दिनांक 21.09.96 302 भा.द.वि.	देवनी टोपनो, सा. बाना बीरा, थाना रनिया (मृत)
10. चान्हो	97/96 दिनांक 24.10.96 302/34 भा.द.वि.	गंगी उराईन, सा. सिलगाई, थाना चान्हो (मृत)
11. लापुंग	75/96 दिनांक 25.10.96 302 भा.द.वि.	रन्तम मुण्डा, सा. करकपुर डाटा टोली, थान लापुंग (मृत)

थाना का नाम	काण्ड सं./धारा	अभियुक्त का नाम/पता एवं स्थिति
12. तमाड़	88/96 दिनांक 06.10.96 302/201 भा.द.वि.	टानु पाहन, सात्र बधाई, थाना तमाड़ (मृत)
13. मुरहू	50/96 दिनांक 15.12.96 302/201 भा.द.वि.	मोरगा पाहन का बेटा एवं बहु, सा. रथडीह, थाना मुरहू (मृत)

राँची जिला

वर्ष **1997**

थाना का नाम	काण्ड सं./धारा	अभियुक्त का नाम/पता एवं स्थिति
1. बेड़ो	01/97 दिनांक 01.01.97 302 भा.द.वि.	मंगरा उरांव, ग्राम बलरामपुर, थाना बेड़ो (मृत)
2. रातु	20/97 दिनांक 19.02.97 323/324/307/302/201 /34 भा.द.वि.	साधु मुण्डा, ग्राम दलादली, थाना रातु (मृत)
3. मुरहू	10/97 दिनांक 28.03.97 302/201/34 भा.द.वि.	पांडो मुण्डा व गुद्ध मुण्डा, सा. कोलतो, थाना मुरहू (मृत)
4. माण्डर	20/97 दिनांक 01.04.97 341/323/302/34 भा.द.वि.	मेरी किस्पोट्टा, ग्राम मटीया टोली, थाना माण्डर (मृत)
5. कर्रा	26/97 दिनांक 25.04.97 302/201 भा.द.वि.	शनिचरी तिग्गा, ग्राम जलटंडा, थाना कर्रा (मृत)
6. बेड़ो	26/97 दिनांक 08.05.97 302/307/302 भा.द.वि.	बन्दरा उरांव की बड़ी बहन, ग्राम सरी देवरी, थाना बेड़ो (मृत)

प्रतिवेदन में तथ्यों का विश्लेषण करने के पश्चात् यह निष्कर्ष सामने आता है कि उपर्युक्त काण्डों में 70 प्रतिशत पीड़ित व्यक्ति, औरत विशेषकर विधवा एवं अकेली रहने वाली औरत होती है।

जिला गुमला

वर्ष 1995 के काण्डों की विवरणी निम्न प्रकार है :

1. कामडारा थाना काण्ड सं. 3/95 दिनांक 4.1.95 धारा 302 भा.द.वि., ग्राम टुरन्डु से वादी जेरो टोपनो ग्राम टुरन्टु के विरुद्ध शंकर टोपनो के बयान पर प्रतिवेदित हुआ। काण्ड में अभियुक्त शंकर टोपनो अपनी पतोहू सुकवारी देवी तथा पोती बन्धनी मुण्डाईन पर डायन का आरोप लगाकर अपने घर में सब्बल से मार कर हत्या कर दी। इस काण्ड में अभियुक्त को फरार दिखाते हुए अंकित प्रतिवेदन समर्पित किया गया।

2. जलडेगा थाना काण्ड सं. 3/95 दिनांक 27.1.95 धारा 302/201 भा.द. वि., ग्राम कोनमेरला से वादी अधनों डुंगडुंग के बयान के विरुद्ध असरा डुंगडुंग के प्रतिवेदित हुआ। काण्ड में असारी डुंगडुंग की डायन का आरोप लगाकर हत्या, अभियुक्त असरा डुंगडुंग ने कर दी। काण्ड में आरोप-पत्र समर्पित किया गया।

3. रायडीह थाना काण्ड सं. 10/95 दिनांक 8.2.95 धारा 302 भा.द.वि., ग्राम ढोलचुआ जंगल से वादी लकड़ा, उरांव, पे. चरवा उरांव, सा. तिलाई टांड़, थाना पालकोट, जिला गुमला के बयान पर विरुद्ध रन्थु भोगता, बंधु भोगता साकिन, तिलाई टांड, थाना पालकोट, जिला गुमला से प्रतिवेदित हुआ। काण्ड में वादी के पिता चरवा उरांव को गुमला लकड़ी बेचने ले जाते समय अभियुक्तों ने लाठी तथा फरसा से मार कर हत्या कर दी तथा भाग गये। रन्थु भोगता को आरोप-पत्र अभियुक्त बन्धु भोगता को फरार दिखाते हुए समर्पित किया गया।

4. जलडेगा थाना काण्ड सं. 11/95 दिनांक 6.5.95 धारा 302 भा.द.वि., ग्राम पैतानो हुकुम टोली से वादी जोहन लुगुन पे. बाप्डु लुगुन, सा. पैतानो, थाना जलडेगा, जिला गुमला के विरुद्ध गेलेउशन लुगून के प्रतिवेदित हुआ। दिनांक - 5.5.95 को वादी की पत्नी विश्वासी लुगून टाटी बाजार से शाम को अपने घर आ रही थी। उसी समय अभियुक्त गेलेउशन लुगून डायन का आरोप लगा कर टाँगी से मार कर हत्या कर दी। अभियुक्त को गिरफ्तार कर जेल भेजा गया। आरोप-पत्र समर्पित किया गया है।

5. भा.द.वि., ग्राम डुमकी टोली से वादीनी फुलमनी बाड़ा, सा. बोगराम थाना, कोलेबिरा, जिला गुमला के बयान के आधार पर विरुद्ध इग्नेश खड़िया सोमरा खड़िया तथा तिलो भोगता के प्रतिवेदित हुआ। काण्ड में दिनांक 9.7.95 को रात्रि

करीब 10 बजे अभियुक्तों ने मृतिका के घर का खपड़ा हटाकर घर में प्रवेश कर दरवाजा खोलकर वादिनी की माँ को डायन का आरोप लगाकर टांगी से मार कर हत्या कर दी तथा शव को देवनदी में ले जाकर छिपा दिया। अनुसंधान के बाद अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप-पत्र समर्पित किया गया।

6. कुरडेग थाना काण्ड सं. 33/95 दिनांक 6.10.95 धारा 302 भा.द.वि., ग्राम करवारजोर से वादी गजेन्द्र मांझी, सा. करवारजोर, थाना कुरडेग के बयान पर विरुद्ध कोइन्दी देवी तथा मोहन मांझी साकिन करवारजोर, थाना कुरडेग के प्रतिवेदित हुआ। काण्ड में दिनांक 6.10.95 ग्राम करवारजोर में अभियुक्त मोहन मांझी की पुत्री का चटडी थी उसमें बादी की माँ डुमर देवी भी गयी थी। वहाँ शराब की व्यवस्था की गयी थी। मृतिका डुमेर देवी को मोहन मांझी और कोईन्दी देवी ने हड़िया पिलायी थी। हड़िया में जहर मिलाया गया था जिससे मृतिका की मृत्यु हा गयी। इसके 15 दिनों पहले अभियुक्त मोहन मांझी के बीच डायन-बिसाईन को लेकर कुछ बाताबाती हुई थी। मृतिका पर डायन का आरोप लगाया गया था। काण्ड में आरोप पत्र समर्पित किया गया।

7. बानो थाना काण्ड सं. 32/95 दिनांक 7.11.95 धारा 302/201/376/34 भा.द.वि., वादी मसीह मुण्डा पे. मुटु मुण्डा, साकिन मैगसेर थाना बानो के बयान पर विरुद्ध शकिन मुण्डा, सुकरा मुण्डा के प्रतिवेदित हुआ। काण्ड में दिनांक 5.10.95 को वादी की चचेरी भाभी ऋषि देवी और भतीजी लुदी कुमारी शराब बेचने के लिए नवांगाँव बाजार गयी थीं। शाम को बाजार से लौटते समय अभियुक्तों ने ऋषि देवी को डायन का आरोप लगाकर उसे पकड़कर बलात्कार किया, बाद में सिर को पत्थर से कुचल कर हत्या कर दी। काण्ड में अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप-पत्र समर्पित किया गया।

8. पालकोट थाना काण्ड सं. 61/95 दिनांक 2.11.95 धारा 302 भा.द.वि., ग्राम बिलींगबिरा से वादी बहुरन ग्वाला, पे. विश्राम ग्वाला, सा. बिलींगबिरा, थाना पालकोट, जिला गुमला के बयान पर विरुद्ध पद्मावती देवी, जौजा बालकिशोर सिंह, सा. बिलींगबिरा, थाना पालकोट प्रतिवेदित हुआ। काण्ड में दिनांक 2.11.95 को वादी जब बाजार से घर लौटा तो हल्ला सुना कि वादी की माँ सत्तो देवी को गाँव की पद्मावती देवी ने डायन का आरोप लगाकर टाँगी से काट कर हत्या कर दी। दो दिन पहले पद्मादेवी का लड़का मर गया था, इस बात को लेकर वादी की माँ की हत्या कर दी गई। काण्ड में आरोप-पत्र समर्पित किया गया।

9. गुमला थाना काण्ड सं. 226/95 दिनांक 13.11.95 धारा 302 भा.द. वि., ग्राम सलमाटोमड़ी टोली, थाना गुमला के फरकु प्रधान पे. सुधु प्रधान, सा. सलमाटोली के बयान पर विरुद्ध सुखा प्रधान के प्रतिवेदित हुआ। काण्ड में दिनांक 12.11.95 को संध्या पाँच बजे वादी की पत्नी को डायन का आरोप लगाकर टाँगी से मार कर हत्या कर दी। दिनांक 11.11.95 को अभियुक्त का लड़का बीमारी से मर गया था। इस काण्ड में अभियुक्त के विरुद्ध आरोप-पत्र समर्पित किया गया।

10. गुमला थाना काण्ड सं. 256/95 दिनांक 19.12.95 धारा 448/302/34 भा.द.वि., ग्राम कोइनजारा से वादी रामनाथ महतो, पिता स्व, चेतु महतो, सा. कोईनजारा थाना+ जिला गुमला के बयान पर विरुद्ध : (1) चैतन महतो, पिता सोमनाथ महतो, (2) केशव महतो, पिता सोमनाथ महतो, (3) सोमनाथ महतो, पिता चैतन महतो, (4) परमेश्वर महतो, पिता स्व. जगत सभी साकिनान -काईनजारा थाना+जिला गुमला के प्रतिवेदित हुआ है। काण्ड का सारांश यह है कि दो माह पूर्व से चैतन महतो, पिता सोमनाथ महतो बराबर बीमार रहा करते है। इसी कारण अभियुक्तों को संदेह था की वादी की पत्नी महली देवी ने चैतन महतो को डायन-बिसाईन कर दिया है। दिनांक 18.12.95 को वादी और उसक बाल-बच्चे घर पर नहीं थे। अभियुक्त-गण मौका का फायदा उठाकर डायन-बिसाईन का आरोप लगारक उसी के घर में वादी की पत्नी की हत्या कर आग लगा दी।

वर्ष 1996

11. पालकोट थाना काण्ड सं. 6/96 दिनांक 16.1.96 धारा 302/201 भा.द.वि., ग्राम पुरनाडीह से वादी लोहरा खड़िया, पे. डोरा खड़िया, सा. कोडर केला, पुरनाडीह थाना, पालकोट जिला-गुमला विरुद्ध अज्ञान के प्रतिवेदित हुआ। दिनांक 9.1.96 को वादी बकरी चराने गयी थी कि नदी में किसी और के शव को तेज हथियार से गर्दन काट कर किसी अज्ञात ने फेंक दिया था। उस मृतका का नाम दुखनी खड़ियाईन था जिसको उनके बहनोई डायन कह कर लप्पड़-थप्पड़ किये थे जो उसे शक किया गया है। काण्ड अभी अनुसंधान अन्तर्गत है।

12. टी-टांगर थाना काण्ड सं. 6/96 दिनांक 4.3.96 धारा 302 भा.द. वि., ग्राम पंडरोपानी, महतो टोली से वादी सुकरू बड़ाईक पे. धुरू बड़ाईक, सा. पंडरोपानी, महतो टोली, थाना टी-टांगर, जिला गुमला के प्रतिवेदित हुआ। इस काण्ड का सारांश यह है कि दिनांक 3.3.96 को वादी की भाभी लालमईत

बड़ाईकिन ने अपनी सास को डायन कहा और बोला कि कैसा डायन-भूत कर दिया है मेरे लड़के को जो बीमार हो रहा है। उस पर सास बोली कि मैं नहीं की हूँ। इस पर लालमाईत बड़ाईकिन टांगी लेकर सास की गर्दन और सिर में मार कर हत्या कर दी। हत्या का कारण अभियुक्त ललमाईत बड़ाईकिन का बच्चा बीमार था। इस बात के शक पर अपनी सास की हत्या कर दी। अभियुक्त को गिरफ्तार कर जेल भेजा गया। आरोप-पत्र संभावित है।

13. बानों थाना काण्ड सं. 10/96 दिनांक 24.2.96 धारा 302/201/34 भा.द.वि., ग्राम सिमहातु से वादी बन्धना लोहरा, पे. करिया लोहरा, साकिन सिमहातु, थाना बानो, जिला गुमला विरुद्ध : (1) दुखना लोहरा, पिता सोमरा लोहरा (2) सोमरा लोहरा, पिता स्व. एतवा लोहरा, साकिन सिमहातु, थाना बानो, जिला गुमला के प्रतिवेदित हुआ। इस काण्ड का सारांश यह है कि दिनांक 22.3.96 को वादी की बहन मंगरी देवी पूजा के लिए मुर्गा खरीदने सिमहातु बार टोली गयी थी। उसी समय एकान्त देखकर अभियुक्त सोमरा लोहरा ने उसे काट कर हत्या कर दी। मारने का कारण कुछ दिन पहले सोमरा लोहरा का लड़का बीमारी से मर गया था तो अभियुक्तगण मृतिका को डायन समझने लगे और डायन का आरोप लगाकर उसकी हत्या कर दी। अभियुक्तों को गिरफ्तार कर जेल भेजा गया। काण्ड में आरोप-पत्र संभावित है।

14. चैनपुर थाना काण्ड सं. 16/96 दिनांक 8.4.96 धारा 302/34/323 भा.द.वि., ग्राम जयपुर से वादिनी सुशीला खाखा, पुत्री सिमोन खाखा, सा. जयपुर थाना, चैनपुर, जिला गुमला विरुद्ध : (1) सिब्रायानुस टोप्पो, (2) गोयलंसन टोप्पो (3) पियुस केरकट्टा सभी साकिनान जयपुर थाना, चैनपुर, जिला गुमला के प्रतिवेदित हुआ। घटना का सारांश यह है कि दिनांक 7.4.96 को करीब 7.30 बजे अभियुक्तगण शराब के नशे में धुत होकर वादी के घर में आये और वादिनी की माँ को पटककर उसकी नाभी में ऐड़ी से रौंद कर तथा गर्दन ऐंठकर डायन-भूतनी का आरोप लगाकर हत्या कर दी। उसी समय वादिनी माँ को छुड़ाने के लिए गई तो उसे भी मारा और वहाँ से भगा दिया। थोड़ी देर के बाद वादिनी की मृतिका माँ घटनास्थल पर ही मृत अवस्था में पाई गई। सभी अभियुक्तों को गिरफ्तार कर जेल भेजा गया है तथा काण्ड में आरोप-पत्र समर्पित किया गया।

15. बोलवा थाना काण्ड सं. 2 3/96 दिनांक 09.4.96 धारा 302/34 भा.द.वि., ग्राम समसेरा चम्मा टांड से वादी चुन्नु तुरी, पिता श्री शनिचर तुरी

सा. समसेरा चम्मा टांड़, थाना-बोलवा, जिला गुमला विरुद्ध : (1) बैजू तुरी, (2) गुरूदयाल तुरी, (3) रूपनंदन तुरी, सभी साकिनान समसेरा चम्मा टांड़, थाना बोलवा, जिला गुमला के प्रतिवेदित हुआ। घटना का सारांश यह है कि वादी ने आरोप लगाया है कि दिनांक 9.4.96 को वादी की माँ चापाकल से पानी लाने के लिए गई हुई थी और पानी लेकर वापस आ रही थी उसी समय रास्ते में उपरोक्त तीनों अभियुक्त वादी की माँ को घेर लिया और डायन-बिसाईन का आरोप लगाकर टाँगी से गर्दन पर प्रहार कर दिया जिससे मृतिका वहीं गिर गई एवं अभियुक्तगण गर्दन काट कर सिर को अलग कर दिया और सिर को लेकर बोलवा तरफ जाते हुए बोले कि जो भी इनका बेटा या बेटी आयेंगे तो उनलोगों को भी इसी तरह से काट दूंगा।

16. बानो थाना काण्ड सं. 26/96 दिनांक 6.6.96 धारा 302 भा.द.वि., ग्राम रायकेड़ा बेड़ा सुरीन टोली से वादिनी झालो जौजा के बयान पर प्रतिवेदित हुआ। काण्ड में दिनांक 5.6.96 को करीब 5 बजे शाम में वादिनी के पति कजरू जोजो जब जोदो जोजो के खेत पर खड़े थे तभी उसी गाँव का सवन जोजो हाथ में टाँगी लेकर आया और अंधाधुंध कजरू जोजो के ऊपर प्रहार कर बुरी तरह से जख्मी कर दिया जिससे उसकी मृत्यु हो गई। अभियुक्त को गिरफ्तार कर जेल भेजा जा चुका है। आरोप-पत्र संभावित है।

18. टी-टीगर थाना काण्ड सं. 29/96 दिनांक 26.6.96 धारा 302 भा.द.वि., ग्राम लकड़ाचटा से वादी वामी कुजूर के बयान के आधार पर प्रतिवेदित हुआ। काण्ड में दिनांक 26.6.96 को वादी की माँ मवेशी चरा रही थी उसी समय अभियुक्त साहराई टोप्पो, जो उसी गाँव का है, हाथ में टांगी लिये हुए आया और वादी की माँ को डायन का आरोप लगाते हुए टांगी से गर्दन पर मारा जिससे उसकी मृत्यु हो गई। काण्ड अनुसंधान अन्तर्गत है।

परिशिष्ट - 6

समाचार पत्रों से -

दो ओझा भूत भगा रहे हैं बुंडू प्रखंड के चिटोडीह गाँव में

बुंडू : 15 दिसम्बर, बुंडू प्रखंड स्थित चिटोडीह गाँव में भगत (ओझा) द्वारा डायन घोषित कर दिये जाने से गाँव में दो गुट हो गया है। जानकारी के अनुसार चिटोडीह गाँव के हरिदास महतो एवं रंजीत महतो के घर एक माह पूर्व एक जोड़ा गाय-भैंसा मर गया था। इधर वर्तमान समय में हरिदास महतो का बड़ा भाई रोइदास महतो बीमार चल रहा है। इस पर उक्त दोनों का कहना है कि डायन द्वारा हम दोनों के घर को बिगाड़ दिया गया है। इसके कारण हमारे बैल, गाय, भैंस मर रहे हैं और हमलोग भी बीमार रह रहे हैं। इस संबंध में ग्रामीणों की बैठक बुलायी गयी। बैठक में ग्रामीणों ने फैसला लिया कि डायन को पकड़ने के लिए ओझा (भगत) बुलाया जाये।

ग्रामीणों ने चंदा कर पाँच हजार रुपये में बंदगाँव निवासी भगत (ओझा) मोहन सिंह मुण्डा को बुलाया। ओझा ने गाँव के प्रत्येक घर से चावल और उसका निशाना लाने को कहा। जमा किये गये सभी चावल को ओझा ने एक बर्तन में पकाया। ग्रामीणों ने बताया कि चिटोडीह गाँव के धरमा महतो और लघनू महतो के परिवार का चावल ठीक ढंग से नहीं पका, तब ओझा मोहन सिंह मुण्डा ने धरमा महतो की पत्नी रजनी देवी एवं लघनू महतो की पत्नी सजनी देवी को डायन घोषित करार दिया। इसके बाद उसके समर्थकों द्वारा विरोध किया गया। उन लोगों ने दूसरे ओझा को बुलाने की बात ग्रामीणों के समक्ष रखी। इसके बाद सोनाहातु के ओझा प्रीतम सिंह मुण्डा को दो हजार रुपये देकर बुलाया गया। प्रीतम सिंह मुण्डा चिटोडीह गाँव आया है। समाचार लिखे जाने तक चिटोडीह गाँव में ही दोनों ओझा हैं और वे दोनों तथाकथित डायन पकड़ने की कार्रवाई में लगे हुए हैं। अंधविश्वास के कारण दोनों गुटों में तनाव हो गया है। इधर डायन घोषित की गयी सजनी देवी के पुत्र महेन्द्र महतो ने बुण्डू थाने को इसकी सूचना दी है। सूचना पाकर पुलिस उक्त गाँव गयी है।

(साभार : प्रभात खबर, 16 दिसम्बर 1998)

भूत भगाने के नाम पर ओझा ने पाँच हजार रुपये ऐंठ लिए

बुण्डू, 26 दिसम्बर : बुण्डू प्रखंड का चिटोडीह ग्राम इन दिनों सुर्खियों में है जहाँ बंदगांव के एक ओझा द्वारा दो महिलाओं को डायन घोषित किये जाने एवं मुर्गे का खून पिलाकर भूत भगाने की घटना प्रकाश में आने के बाद माहौल गर्म हो गया है।

ज्ञातव्य है कि उक्त ग्राम में कुछ माह पूर्व मवेशियों के मरने एवं कुछ लोगों का स्वास्थ्य खराब रहने के कारण गाँव में भूत व डायन का प्रकोप होना समझकर ग्रामीणों ने बंदगांव से एक ओझा मोहन सिंह मुण्डा को बुलाया था। उक्त ओझा ने चिटोडीह ग्राम में एक झोपड़ी का निर्माण कर उसमें कुछ मूर्तियों की स्थापना की तथा यह घोषणा की कि ग्राम के सभी विवाहित महिला व पुरुष अपने घर से चावल की छोटी पोटलियाँ लायेंगे, जिन्हें संयुक्त रूप से तीन घंटे तक पकाया जायेगा। जिसकी पोटलियों के चावल नहीं पकेंगे वही डायन है। ओझा के निर्देशानुसार गत सात दिसम्बर को चिटोडीह ग्राम के महतो टोली एवं महली टोली से लगभग 150 पोटलियाँ एकत्रित की गयीं और बगैर गिने ही उसे बड़ी डेगची में पकने के लिए चूल्हे पर चढ़ाया गया। कुछ समय बाद ओझा दो लोटे में पानी ले अकेला झोपड़ी में गया व आम के पत्ते से ढंक लोटे को चबूतरे में रख दिया। लेकिन लोटे में क्या है, इसे किसी को नहीं देखने दिया गया। फिर डेगची से कुछ पोटलियों को निकाल कर लोटे में डाला गया तथा पुनः लोटे को पकते डेगची में डाला गया। तत्पश्चात् डेगची को उतार पोटलियों को जाँचा गया तो सजनी देवी एवं धरमा महतो की पत्नी रजनी देवी को डायन करार दिया गया। उपर्युक्त प्रकरण के दौरान लोटा लेकर ओझा का झोपड़ी में जाना, आम पत्ती से ढंके लोटे को अन्त में डेगची में ओझा द्वारा उडेल दिया जाना कुछ ग्रामीणों के दिमाग में शक पैदा कर गया। दूसरे दिन मुण्डा टोली एवं गोराई टोली के लोगों के चावल के परीक्षण का समय था। इस दौरान स्वयं कुछ जागरूक ग्रामीण चौकस थे। उन्होंने घोषणा कर दी कि अन्त में ओझा द्वारा लोटे की सामग्री को डेगची में उड़ेलने से पूर्व वे जाँच करेंगे तथा ऐसा ही किया भी गया। परिणाम स्पष्ट था सभी पोटलियों का चावल पका पाया गया। उक्त ओझा की करतूतों का पर्दा उठ गया था। फिर भी अधिकांश अंधविश्वासी ग्रामीणों

ने ओझा का अनुसरण करते हुए डायन घोषित लोगों पर दबाव डाला कि वे भूत भगाने हेतु मुर्गा व बकरे की बलि दें।

धरमा महतो तो ऐसा करने को तैयार भी हो गया, किन्तु स्वास्थ्य विभाग में कार्यरत महेन्द्रनाथ महतो एवं उसकी माँ अंजनी देवी द्वारा ऐसा करने से इंकार करने पर उन्हें मुर्गे का खून पिलाया गया। ज्ञात हो कि महेन्द्रनाथ महतो पूर्णतः शाकाहारी हैं। इस प्रकार कपटपूर्ण तरीके से दो महिलाओं को ओझा ने डायन घोषित किया तथा इस एवज के बतौर शुल्क पाँच हजार रुपये ऐंठ लिये।

विगत कुछ महीने में उक्त ओझा द्वारा अंधविश्वासी ग्रामीणों से मोटी रकम वसूल कर डायन घोषित करना, फिर ग्राम को डायन मुक्त करने के लिए शराब, मुर्गा व बकरा मांगने की कई घटनाएँ इस क्षेत्र में हो चुकी हैं। सूत्र बताते हैं कि इससे पूर्व बुण्डू के कुम्हार टोली में भी उस ओझा द्वारा डायन भगाने का इसी प्रकार का नाटक किया गया था।

(साभार : प्रभात खबर, 27 दिसम्बर 1998)

मैला खिलाने की घटना को याद कर सिहर उठती है कोडरमा की रूकनी

जमशेदपुर, 25 दिसम्बर : कोडरमा की रूकनी अब मानसिक तौर पर विक्षिप्त जैसा व्यवहार करने लगी है। उस पर डायन होने का आरोप लगाकर उसे इतना प्रताड़ित किया गया कि वह दो वर्ष बाद भी उस घटना से उबर नहीं पायी है। सत्तर वर्षीया इस विधवा महिला का दोष मात्र इतना ही था कि उसने बधना के घर जाकर कुछ खाना मांगा था। वह फ्री लीगल एण्ड कमेटी द्वारा आयोजित अंधविश्वास रैली में भाग लेने पश्चिम सिंहभूम के कोलेबीरा गाँव आयी है।

घटना जनवरी 1997 की है। बुधन धोबी की विधवा कोडरमा के वृन्दा गाँव में रहती थी। उसे एक बेटा भी है। गरीबी के कारण सारे गांव में घूम-घूम कर मांग कर पेट भरती थी। इसी क्रम में वह बंधन महतो के घर गयी थी। बंधन की बहू (पतोहू) पहले से ही बीमार थी। उसका पति रोजी-रोटी की तलाश में दिल्ली गया था। जिस दिन रूकनी बुधन के घर गयी उसी दिन बंधन की बहू की तबीयत और खराब हो गयी। लोगों ने बंधन को समझा दिया कि रूकनी डायन है और उसके ऊपर अत्याचार का सिलसिला शुरू हो गया। इसके बाद तो उस पर अत्याचार का पहाड़ टूट पड़ा। चप्पल पर थूक कर उसे चटाया गया। तरह-तरह से रूकनी को प्रताड़ित किया गया। वह चिल्लाती रही, लेकिन कोई उसकी सहायता के लिए नहीं आया। वह कहती रही कि वह निर्दोष है। इतना कुछ करने के बावजूद जब बुधन और उसके परिजनों का मन नहीं भरा तो पेशाब और पाखाना (मल-मूत्र) घोल कर रूकनी को पिलाया गया। अंधविश्वास के कारण ऐसी धारणा है कि अगर डायन को पखाना घोल कर पिला दिया जाता है तो उसकी डायन विद्या समाप्त हो जाती है।

रूकनी बताती है कि बाद में उसे ओझा के पास ले जाया गया। अरवा चावल, सिन्दूर, मुर्गा मंगाया गया और फिर शुरु हुआ ओझा द्वारा झाड़-फूंक का दौर। रात भर रूकनी को कमरे में बन्द कर पीटा गया। दो साल बाद भी उसके टखने में चोट के निशान अब भी मौजूद हैं। मार-पीट कर जब रूकनी को छोड़ दिया गया तो वह कोडरमा में फ्लैक का काम देख रहे भिखारी साहू के पास गयी।

(साभार : प्रभात खबर, 26 दिसम्बर 1998)

ओझा करार देकर वृद्ध की लाठी से पीट-पीट कर हत्या

डालटनगंज, 17 दिसम्बर : छतरपुर थाना के रामसदेया गांव में कल दिन में गाँव के लोगों ने 50 वर्षीय कथित ओझा को लाठी से पीट-पीट कर मार डाला। इस सम्बन्ध में छतरपुर थाना में प्राथमिकी दर्ज की गयी है। समाचार लिखे जाने तक किसी की गिरफ्तारी की सूचना नहीं है। इस घटना से गाँव में तनाव है। गिरफ्तारी के डर से गाँव के अधिसंख्य लोग भाग गये हैं।

समाचार के अनुसार कल दिन में करीब दस बजे गाँव के वृक्ष भुइयां को गाँव के ही रामचन्द्र भुइयां एवं उसके पुत्र भीम भुइयां बातचीत के लिए बुलाकर ले गये। दोनों उसे बस्ती के करीब एक किलोमीटर दूर एक पेड़ के पास ले गये। वहाँ गाँव के 30-40 लोग पहले से मौजूद थे। वहाँ पर गाँव की एक विधवा महिला को भूत बताकर मारने का आरोप लगाया गया। इस बात को लेकर वृक्ष भुइयां और रामचन्द्र भुइयां के बीच कहासुनी भी हुई। इसके बाद रामचन्द्र भुइयां और वहाँ जमा लोगों ने वृक्ष भुइयां की लाठी से जमकर पिटाई कर दी, जिससे उसकी मौत हो गयी। घटनास्थल से कुछ दूरी पर वृक्ष भुइयां की छोटी बेटी बकरी चरा रही थी। अपने पिता को पिटते देख कर दौड़कर अपने घर चल गयी और घटना की जानकारी अपने बड़े भाई वृजलाल भुइयां को दी। जानकारी मिलने के बाद वह दौड़कर घटनास्थल पर पहुँचा, मगर उसे वृक्ष भुइयां तक नहीं पहुँचने दिया गया। वृक्ष भुइयां को तब तक लोगों ने घेर कर रखा जब तक उसकी मौत नहीं हो गयी। उसकी मौत के बाद मारपीट करने वाले सभी लोग वहाँ से भाग गये। घटना की सूचना मृतक के पुत्र ने छतरपुर थाने को दी। सूचना मिलने के बाद घटनास्थल पर पहुँचकर पुलिस ने लाश को अपने कब्जे में ले लिया। लाश को पोस्टमार्टम के लिए सदर अस्पताल भेजा गया।

(सभार : प्रभात खबर)

सहायक ग्रंथ सूची

1.	आर्चर, डब्लू. जी., 1947	द संथाल ट्रिटमेंट ऑफ विचक्राफ्ट, मैन इन इंडिया, वौल्यूम - xxxvii नं. 2.
2.	डग्लस, मेरं, 1970	विचक्राफ्ट कन्फेशन एण्ड एजुकेशन।
3.	इस्राइल एम., 1963	विचक्राफ्ट इन उराँव विलेज, बुलेटिन ऑफ द बी.टी.आर. आई, वौल्यूम - v, नं. 2.
4.	सरन, ए. बी., 1978;	ट्राइबल स्टडीज। मर्डर एंड स्युसाइड्स अमंग द मुंडा एंड द उराँव।
5.	सच्चिदानन्द, 1960	कल्चर चेन्ज इन बिहार ट्राइब्स, मुंडा, उराँव, बुलेटिन ऑफ बी.टी.आर.आई. एंड वौल्यूम- ii नं. 1.
6.	शशि, एस. एस.	द ट्राइबल विमेन ऑफ इंडिया।
7.	समाचार-पत्रों में डायन हत्या से संबंधित प्रकाशित समाचारों के संकलन का आधार भी लिया गया है।	
8.	21-22 अगस्त 1996 को राँची में आयोजित डायन-प्रथा पर राष्ट्रीय संगोष्ठी के निष्कर्षों का भी समावेश किया गया है।	